संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

वर्षः ९
अंकः ६८
अगस्त १९९८
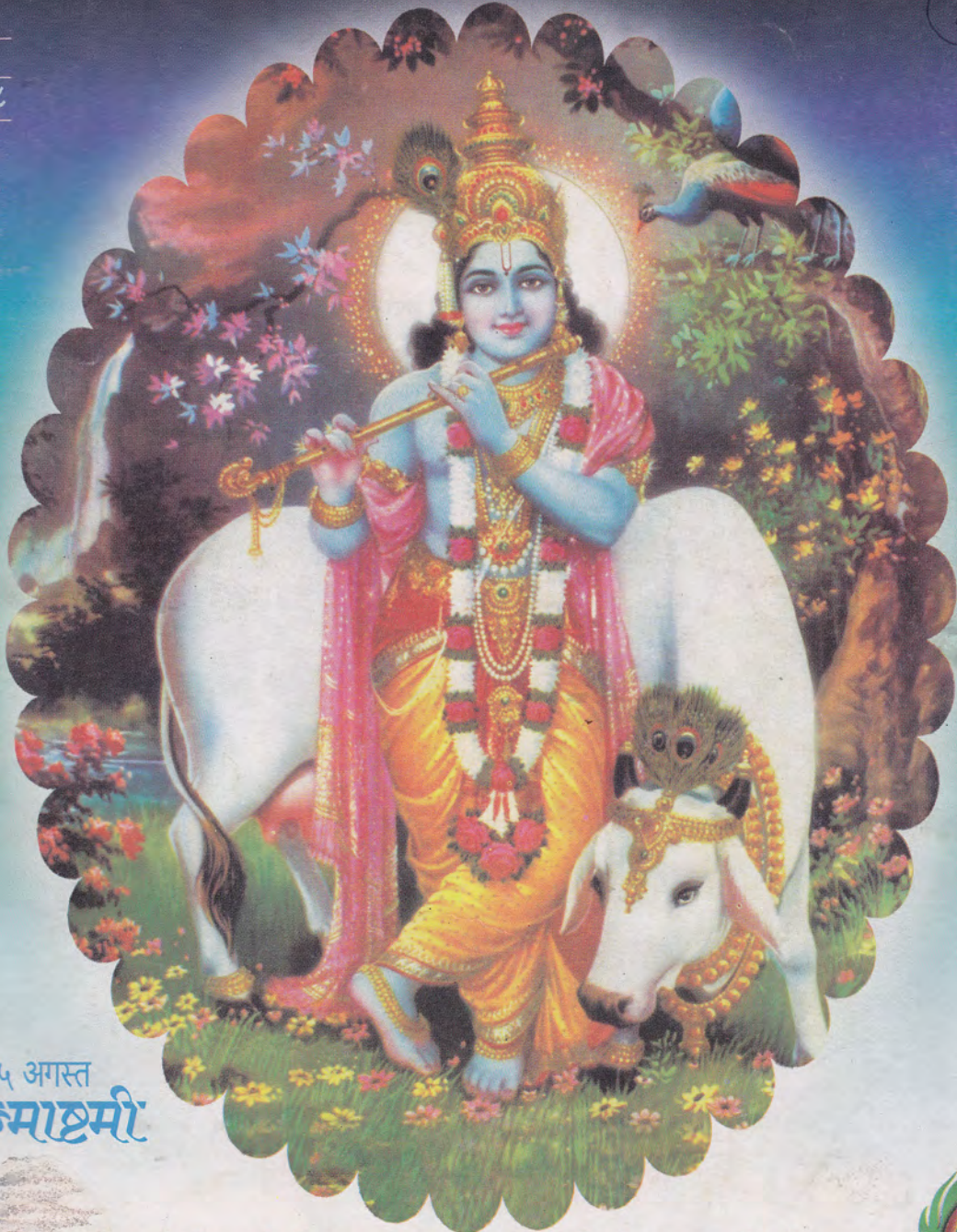
१५ अगस्त
जन्माष्टमी

मोहनी मूरती, साँवरी सूरती, नैना बडे विशाल। अधर सुधारस मुरली, बिराजत उर वैजंती माल॥
सच्चिदानंद श्री कृष्ण हैं, सब जग तारणहार। नंद नंदन वंदन हैं, मिलता सुख अपार॥

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ६८
९ अगस्त १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

इस अंक में

आश्रम विषयक जानकारी
Internet पर उपलब्ध है : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो

गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो।
ब्रह्मज्ञान दो, हमें तार दो ।
मेरे दुर्गुणों को संहार दो।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

मैं विकट भँवर में हूँ फँसा।
मैं मोह माया में हूँ धँसा।
मेरी एषणा का निदान हो।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

मैं आत्मा निष्कलंक करूँ।
मैं नव आदर्शों से अंक भरूँ।
मेरी वेदना का सुखान्त हो ।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

मैं सर्व गुणों की सुगन्ध बनूँ।
मैं मर्म ज्ञान से हृदय भरूँ।
मेरी चेतना में नव संचार हो ।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

मैं सत्य वचन की आह भरूँ ।
मैं नित्य नमन का पाठ पढूँ।
मेरी नैतिकता का विस्तार हो।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

सुज्ञान दो, हमें तार दो।
मेरे दुर्गुणों का संहार हो।
मुझे निर्मल पावन अहसास हो।
गुरु ज्ञान दो गुरु ज्ञान दो॥

- सुभाष चौहान 'निर्मल'
भीनमाल, जि. जालोर।

वाह रे वाह मेरे नंदलाला !

रोम रोम ने छेड़ा तराना।
दिल हुआ है श्याम दिवाना।
मुरली की धुन पर मन मस्ताना॥

वाह रे वाह मेरे नंदलाला।
वाह रे वाह गिरधंर गोपाला॥

स्वास स्वास में वास तेरा।
कण, कण में जलवा तेरा॥

मन मंदिर में मूरत तेरी।
हर दिल में है सूरत तेरी।
जोड़ ली तुझसे प्रीति की डोरी॥

वाह रे वाह...

ग्वाल गोपियों का नंदलाला।
मीरा का तू गिरधर गोपाला॥

राधा का तू बाँके बिहारी।
भक्तजनन का तू हितकारी।
तुझसे महकी जगत फुलवारी॥

वाह रे वाह...

छछियन की छाछ पे नाच किया।
माधव तूने मन मोह लिया॥

माखन संग मेरा चित्त भी चुराया।
घट घट में तेरा ही साया।
जिसने खोजा उसने है पाया॥

वाह रे वाह...

कालीनाग को नाथ दिया।
दुष्टों का संहार किया॥

गीताज्ञान में अमृत तेरा।
पीने से मिटा जन्मों का फेरा।
नूरे नजर में तेरा ही डेरा॥

वाह रे वाह...

रसिक बिहारी तू रास रचा।
प्रेमरंग से ये दिल छलका॥

मोर मुकुट पीताम्बरधारी।
मनमोहन तेरी लीला है न्यारी।
जाऊँ मैं तुझपे वारी वारी॥

वाह रे वाह...

- जानकी ए. चंदनानी
अमदावाद

सफलता के छः सिद्धान्त

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मानव यदि अपने जीवन में कुछ सिद्धान्तों को अपना ले तो वह पूर्ण रूप से उन्नत हो सकता है।

सफलता के उन सिद्धान्तों में से **पहला सिद्धान्त है अविश्रान्त कार्य।** आलस्य छोड़कर तत्परता एवं कुशलतापूर्वक कार्य करने का नाम है अविश्रान्त कार्य। जो भी कार्य करें, उसे पूरे मनोयोग से, दिल लगाकर करें। ऐसा नहीं की बना तो रहे हों रोटी और चिन्तन हो रहा हो किसी अन्य का। देख रहे है कहीं इधर-उधर और रोटी जल जाये... नहीं। प्रत्येक कार्य कुशलतापूर्वक करें।

दूसरा सिद्धान्त है अहं का त्याग। काम करते-करते जितना आप अपने 'मैं' को भूलते हैं, काम उतना ही ज्यादा अच्छा होता है। आप चाहे कितने भी शास्त्र पढ़कर प्रवचन देने जाओ किन्तु यदि प्रवचन करते-करते मन में अहं आ जाए कि 'लोगों पर मेरे प्रवचन का अच्छा प्रभाव पड़ रहा है...' तो आपका पढ़ा-लिखा सब व्यर्थ हो जाता है और आप असफल हो जाते हो। यदि आप अपने 'मैं' को त्यागकर बोलते हो तो शुरू में तो आप शास्त्र के वचन बोलते हो लेकिन बाद में आपके द्वारा सहज ही में अमृतवर्षा होने लगती है जो कि अहं के त्याग का प्रत्यक्ष फल है।

नानकजी ने कहा है :

नानक बोले सहज सुभाऊ।

सफलता का **तीसरा सिद्धान्त है फलाकांक्षा का त्याग।** आप कार्य तो करें किन्तु कुशलता से, तत्परता से एवं अहंकाररहित होकर कार्य करें। कार्य करने के बाद सफलता-असफलता के फल की चिन्ता न करें। कार्य का फल ईश्वर को अर्पण कर दें।

सफलता का **चौथा सिद्धान्त है सार्वभौम प्रेम।** अपने हृदय में सार्वभौम प्रेम रखें। विश्व धर्म परिषद (Parliament of world religions) में मैंने इस बात पर जोर दिया था कि दुनिया को अभी निंदा और नफरत की जरूरत नहीं है वरन् मनुष्य-मनुष्य के बीच प्रेम उत्पन्न हो ऐसे उपदेशों की जरूरत है।

हमारे देश भारत में रहनेवाले और गीता-भागवत-उपनिषदों को न माननेवाले कुछ लोगों ने तथा पड़ोसी देश के लोगों ने हमारे देश का अन्न खाया, हमारे देश में निवास किया और हमारे देश में मुंबई की बस्तियों में बम विस्फोट (Bomb blasting) करवाये, हमारे देश के साथ मित्रता के नाम पर गद्दारी की लेकिन हिन्दुस्तान के लोग कि जो गीता-महाभारत-रामायण-उपनिषदों को मानते हैं उन्होंने कभी-भी किसी भी देश के साथ गद्दारी नहीं की है। यह हमारे सार्वभौम प्रेम का प्रभाव नहीं तो और क्या है ?

मुझमें राम तुझमें राम,
सबमें राम समाया है।
कर लो सभी से प्यार जगत में
कोई नहीं पराया है।।

यह माननेवाले भारतवासियों ने हर धर्म, जाति एवं संप्रदाय के लोगों को सहज ही में अपनाया है। अतः मानव को चाहिए कि वह नफरत का बदला नफरत से न दे। अगर आप किसीकी गलती के लिए उसे सजा भी देना चाहें एवं अंतर में उसके लिए प्रेम एवं भलाई की भावना रखकर अगर बाहर से सजा देते हैं तो आपका सजा देना भी धर्म हो जाता है।

मान लो, एक आदमी आपको चाकू दिखाता है, दूसरा आदमी चाकू मारने की धमकी देता है लेकिन तीसरा आदमी आपके शरीर पर चाकू घुमाकर ऑपरेशन कर देता है। तो आप पहले आदमी की शिकायत पुलिसथाने में कर देते हैं, दूसरे से सावधान रहते हैं जबकि तीसरे आदमी ने न तो चाकू दिखाया है,

न चाकू मारने की धमकी दी है, वरन् चाकू चलाकर ऑपरेशन किया है उस डॉक्टर को आप धन देते हैं। क्यों ? क्योंकि उसका उद्देश्य आपको दुःख पहुँचाना नहीं है वरन् ऑपरेशन करके आपका दुःख दूर करना है। ऐसे ही आप किसीको दण्ड देकर उसका दुःख या पाप दूर करना चाहते हैं तो यह गलत नहीं है बल्कि आपका कर्त्तव्य है। किन्तु शर्त इतनी ही है कि सबके प्रति हृदय में भलाई की भावना निहित होनी चाहिए।

सफलता का **पाँचवाँ सिद्धान्त है प्रसन्नता।** आप सदैव प्रसन्न रहने की आदत डालिए। किसीने ठीक ही कहा है :

हँसते के साथ हँसे दुनिया,
रोते को कौन बुलाता है ?

हाँ, भगवान के विरह में यदि आँसू बहा दिये तो अलग बात है लेकिन अपने जीवन में कभी फरियाद न करें। 'उसके पास चार मकान हैं... मेरे पास एक भी नहीं...' ऐसा सोचकर दुःखी मत बनो। किसीके पास चार मकान हैं, गाड़ियाँ हैं तो उन्हें संभालने की मुसीबत भी तो ज्यादा है। 'हमारे पास कम सुविधाएँ हैं तो उन्हें संभालने की मुसीबतें भी तो कम हैं !' ऐसा सोचकर अपने चित्त को सदैव प्रसन्न रखो। जो सदैव प्रसन्न रह सकता है, वह ईश्वर की बंदगी में भी सफल हो जाता है एवं दूसरों को भी प्रिय हो जाता है।

सफलता का **छठवाँ सिद्धान्त है निर्भीकता।** आप अपने जीवन में निर्भीकता लायें। जरा-जरा-सी बात में डरें नहीं, वरन् धैर्य एवं साहस के साथ परिस्थिति का सामना करें। भयभीत हो जाने पर निर्णय गलत आने की संभावना ज्यादा रहती है। अतः चाहे कैसी भी परिस्थिति आये, किन्तु आप भयभीत न हो।

इस प्रकार अविश्रान्त कार्य, अहं का त्याग, फलाकांक्षा का त्याग, सार्वभौम प्रेम, प्रसन्नता एवं निर्भीकता- ये जीवन के ऐसे छः सिद्धान्त हैं जिन्हें अपनाकर मानव कठिनतम परिस्थितियों में भी सरलता से अपना लक्ष्य सिद्ध कर सकता है एवं जीवन को सफल बनाकर जीवनदाता से मुलाकात भी कर सकता है।

*

ब्रह्मज्ञानी की महिमा

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

आप चाहे कितना भी धन, यश, सत्ता पा लो किन्तु उसे 'अपूर्व अति' नहीं कहा जा सकता क्योंकि ऐसा नहीं है कि आप ही प्रथम व्यक्ति हो जिसने ये धन-संपत्ति, राज्य-सत्ता, यश-मान-कीर्ति को पाया है या कई सालों से किसीने न पाया हुआ आपने पाया है। नहीं, हरगिज नहीं। आपसे पहले भी कइयों ने इसे पाया है। कई सालों से किसीने नहीं पाया होगा क्या ? अरे ! आपके बाप-दादा ने भी इसे पाया होगा। इन धन, राज्य, कीर्ति आदि को कइयों ने पाया है और छोड़ा है अतः वेदान्त की भाषा में इसे 'पूर्व अति' को पाना कहते हैं।

'अपूर्व अति' क्या होता है ? आत्मज्ञान की प्राप्ति को 'अपूर्व अति' की प्राप्ति कहते हैं। एक बार आत्मदेव को पा लेने के बाद वह वापस कभी छूटता नहीं। जिस जीव ने वह पाया वह जीव फिर जीव नहीं रहता। वह ब्रह्म हो जाता है। उसे दूसरा कुछ भी पाना शेष नहीं रहता है। इस आत्मप्राप्ति या ब्रह्मप्राप्ति को 'अपूर्व अति' कहते हैं।

'पूर्व अति' को पाए हुए और बाहर से सुखी दिखनेवाले लोग तो बहुत नजर आते हैं किन्तु 'अपूर्व अति' को पाए हुए ज्ञानी महापुरुष कभी-कभी, कहीं-कहीं दिखाई देते हैं। ऐसे ज्ञानवानों से हम कैसे मिल पाएँ और उनको कैसे पहचान पाएँ ?

गुरु गोविंदसिंह ने अपने शिष्यों के आगे ज्ञानी

की विलक्षण महिमा का वर्णन करते हुए कहा है :

''ज्ञानी 'अपूर्व अति' को पाये हुए होते हैं। वे अखंड सत्ता के साथ एकरूप हो जाते हैं। ज्ञानी सदैव तृप्त रहते हैं। वे प्रत्येक परिस्थिति में स्थितप्रज्ञ रहते हैं। ज्ञानी की अमीदृष्टि जिस पर पड़ जाती है वह चीज पूजने योग्य बन जाती है। ज्ञानी जिस वस्तु को छूते हैं वह वस्तु प्रसाद बन जाती है। वे जो कुछ बोलते हैं वह शास्त्र बन जाता है।''

ज्ञानी महापुरुष की इतनी भारी महिमा सुनकर शिष्यों ने उत्सुक होकर गुरु गोविंदसिंह से पूछा :

''ज्ञानवान् किस लोक में रहते हैं ? कैसे होते हैं ? वे द्विभुज होते हैं कि चतुर्भुज होते हैं ?'' आदि आदि...

गुरु गोविंदसिंह : ''उनको हमारे जैसे ही दो हाथ और दो पैर होते हैं। शारीरिक रूप से वे एकदम हमारे-तुम्हारे जैसे ही दिखते हैं।''

शिष्य : ''अच्छा ! तो वे पृथ्वीलोक में रहते हैं कि किसी और लोक में रहते हैं ?''

गुरु गोविंदसिंह : ''ज्ञानी हमारे साथ ही, हम लोगों की नाईं ही जीते हैं। ज्ञानी की कोई भी बाह्य चेष्टा विशेष नहीं होती फिर भी वे विशेष होते हैं।''

अष्टावक्रजी महाराज ने ज्ञानी की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा है :

संतुष्टोऽपि न संतुष्टः खिन्नोऽपि न च खिद्यते।
तस्याश्चर्यदशां तां तां तादृशा एव जानते ॥

'ज्ञानी पुरुष लोकदृष्टि से संतोषवान् दिखते हुए भी संतुष्ट नहीं हैं और खेद को प्राप्त दिखते हुए भी खिन्न नहीं हैं। उनकी उस आश्चर्यजनक दशा को उनके जैसे ही ज्ञानी जानते हैं।' (अष्टावक्र गीता : १८.५६)

ज्ञानवान् हर्ष में हर्षित और शोक में खिन्न होते हुए दिखते हैं लेकिन वे भीतर से सदैव निर्लेप रहते हैं। ज्ञानी मोह-माया, राग-द्वेष, क्रोध-आसक्ति आदि से परे होते हैं। वे क्रोध करते हुए भी दिखते हैं। कभी क्रोधावेश में आकर आपको, अपने शिष्यों को दो चार गालियाँ भी सुना देते हैं और दो चार थप्पड़ भी मार सकते हैं लेकिन उसमें भी शिष्यों का कल्याण ही छुपा हुआ होता है। वे शिष्यों को डाँटते हुए भी वास्तव में आशीर्वाद ही देते हैं। ज्ञानी के द्वारा हमेशा दूसरों का कल्याण ही होता है।

ज्ञानी को कोई बंधन नहीं होता है कि जंगल में ही रहना, संप्रदाय चलाना या गृहस्थ रहना। ज्ञानी गृहस्थ भी हो सकते हैं, तपस्वी की नाईं जंगल में, गिरि-गुफाओं में, हिमालय में भी रह सकते हैं या किसी संप्रदाय के अधिष्ठाता के रूप में भी दिख सकते हैं। दूसरे सब लोगों की नाईं ही उनका जीवन होता है। फर्क सिर्फ इतना ही होता है कि वे स्वादिष्ट व्यंजन खाते हुए भी व्यंजनों की आसक्ति से रहित होते हैं। रूखे टुकड़े चबाते हुए भी आत्ममस्ती में रहते हैं। संबंधों के बीच रहते हुए भी वे अंदर से जान चुके होते हैं कि 'सब शरीर के संगी हैं और यह शरीर छुटनेवाला है। मैं तो अजर-अमर आत्मा हूँ।' जैसी स्थिति रंगमंच पर अभिनय करते वक्त अभिनेता की होती है, ठीक ऐसी ही स्थिति हर वक्त संसार में व्यवहार करते समय ब्रह्मज्ञानी की होती है। जैसे हमें रंगमंच पर दिखता है कि अभिनेता क्रोध कर रहा है लेकिन हकीकत में वह क्रोध नहीं करता है, सिर्फ क्रोध करने का अभिनय करता है। वह अंदर से कुपित नहीं होता है। अभिनेता पति का अभिनय करते वक्त अभिनेत्री के साथ पत्नी जैसा व्यवहार करता है लेकिन अंदर से वह जानता है कि 'मैं इसका पति नहीं हूँ और यह मेरी पत्नी नहीं है। ऐसे तो रंगमंच पर मैं कइयों का पति बना और कई मेरी पत्नियाँ बन गईं।' ठीक ऐसे ही ज्ञानवान् संसार के व्यवहार करते-करते अंदर से अपनी समझ बनाये रखते हैं कि 'कई जन्मों में मेरी कई पत्नियाँ आईं और गईं। सिर्फ मेरा आत्मा ही हमेशा मेरे साथ रहा है। असल में मैं ही आत्मा हूँ। शरीर तो कई आये और चले गये।' इस प्रकार ज्ञानी ने अपने वास्तविक स्वरूप आत्मतत्त्व को जान लिया होता है।

गुरु गोविंदसिंह के शिष्यों ने कहा : ''गुरुजी ! यदि आपने ज्ञानी महापुरुष के दर्शन किये हैं तो कृपा करके हमें भी करवा दें।''

अब गोविंदसिंहजी उन नादानों से कैसे कहें कि 'मैं स्वयं ही ज्ञानवान् हूँ ?' अतः उन्होंने कहा :

''हाँ, मैंने तो ज्ञानवान् के दर्शन किये हैं और तुम सबको भी कराऊँगा लेकिन जब समय आएगा तब।

साधन-भजन करते-करते जब वृत्ति सूक्ष्म हो जाएगी तब तुम लोगों में क्षमता आ जाएगी ज्ञानवान् को पहचानने की।''

ब्रह्मज्ञानी को अज्ञानी कभी पूर्ण रूप से पहचान ही नहीं सकता लेकिन साधन-भजन करने से थोड़ी झलकें जरूर मिल सकती हैं। कहते हैं कि : **ज्ञानी की गत ज्ञानी जानें। धीरा की गत धीरा जानें।**

नानकजी ने कहा है :

ब्रह्मज्ञानी की मत कौन बखाने ?
नानक ब्रह्मज्ञानी की गत ब्रह्मज्ञानी जाने ॥

श्री उड़ियाबाबा से किसीने पूछा :

''बाबाजी ! आपकी आत्मा ब्रह्म है कि आपकी देह ब्रह्म है ?''

श्री उड़ियाबाबा ने उस नादान को उत्तर दिया :

''मैं आत्मा देहसहित ब्रह्म हूँ। आत्मा पृथक् और देह पृथक्- यह जिज्ञासुओं को देह की ममता से दूर करने के लिए समझाया जाता है।''

श्रुति ने कहा है :

सर्वं खलु इदं ब्रह्म।

ज्ञानी को सब ब्रह्मरूप ही भासता है, फिर वे 'देह अलग और आत्मा अलग' ऐसी दीवार नहीं बनाते। इसलिए उनके चरण को छुई हुई धूलि भी लोगों के ललाट पर शोभनीय होती है और भाग्य बदल देती है।

एक फकीर थे। उन फकीर को अपनी मस्ती में मस्त देखकर एक कर्मकाण्डी ने बड़ी तिरस्कृत वाणी में कहा :

''तू कैसा है ! न संध्या करता है न पूजा करता है। न यज्ञ करता है न गायत्री-पाठ करता है। ऐसे ही गधे की नाईं बैठा रहता है... मुफ्त की रोटी खाता रहता है।''

फकीर पहुँचे हुए ब्रह्मज्ञानी थे। कर्मकाण्डी के इतना कहने पर भी वे मुस्कुराये।

कर्मकाण्डी को आश्चर्य हुआ ! उसने कुछ क्रोधित होकर कहा :

''तू अजीब है ! मेरे इतना सुनाने पर भी तू मुस्कुराता है ! शर्म नहीं आती ?''

फकीर ने कहा : ''आपने मुझे ठीक पहचाना। गधे में भी मैं ही रहता हूँ और बेशर्म भी मेरा ही रूप है। आप बिल्कुल सत्य कह रहे हैं।''

अज्ञानी के लिए मूर्ख-बुद्धिमान, दुःखी-सुखी, गुजराती-सिंधी आदि में फर्क होता है जबकि ज्ञानी सबमें ब्रह्मभाव रखते हैं, सबको अपना स्वरूप मानते हैं। उनकी अनुभववाणी में से उद्गार निकलते हैं :

सोऽहं... शिवोऽहं... सर्वोऽहं...

धन्य हैं ऐसे ज्ञानी महापुरुष और धनभागी हैं ऐसे ज्ञानियों के प्रसाद से पावन होनेवाले !

संत की क्षमाशीलता

एक संत पुरुष कहीं जा रहे थे। एक दुष्ट व्यक्ति भी उन्हें गालियाँ देता हुआ उनके पीछे-पीछे चलता जा रहा था। संत ने उससे कुछ भी न कहा। वे बहुत देर तक चुपचाप ही चलते रहे। पर्याप्त आगे बढ़ने पर कुछ घर दिखाई पड़ने लगे। अब वे संत पुरुष खड़े रह गये एवं उस व्यक्ति से बोले :

''भाई ! देखो, तुम्हें जो कुछ कहना है, यहीं कह लो। मैं खड़ा हूँ। आगे के घरों में मुझसे सहानुभूति रखनेवाले लोग रहते हैं। वे तुम्हारी बात सुनेंगे तो तुम्हें तंग कर सकते हैं। इससे मुझे बड़ा क्लेश होगा।''

आशा के विपरीत संत का क्षमाशील व्यवहार देखकर वह दुष्ट व्यक्ति बड़ा लज्जित हुआ एवं पश्चात्तापपूर्वक क्षमा माँगने लगा।

संत-महापुरुष अपने स्वभाव के अनुसार अपना अहित करनेवालों को भी क्षमा ही कर देते हैं। अहित करने पर घाटा महापुरुषों को नहीं, वरन् अहित करनेवाले को ही होता है। किसीने ठीक ही कहा है :

क्षमा बड़न को होत है, छोटन को उत्पात।
विष्णु को क्या घटि गयो, जो भृगु ने मारी लात ?

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७० वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अगस्त तक अपना नया पता भिजवा दें।

सच्ची आजादी

[१५ अगस्त : स्वातंत्र्य दिन पर विशेष]

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में आता है कि :

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥

'इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, आग जला नहीं सकती, जल गला नहीं सकता एवं वायु सुखा नहीं सकती।' (गीता : २.२३)

स्वतंत्रता की बलिवेदी पर चढ़नेवाले भारत के वीरों के हाथों में होती थी श्रीमद्‌भगवद्‌गीता एवं मुख में होता था यही श्लोक : **नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि...** ऐसे वीर भी एक-दो नहीं वरन् हजारों की संख्या में होते थे।

आखिर परेशान होकर अंग्रेजों ने जाँच करवायी कि : 'इतनी बड़ी संख्या में देशभक्तों को फाँसी पर चढ़ाने के बावजूद भी दूसरों का मनोबल कमजोर क्यों नहीं होता ? क्यों एक-एक करके सभी वीर हँसते-हँसते फाँसी के फन्दे पर झूल जाते हैं ?'

जाँच के बाद पता चला कि : ''भारतवासियों के पास गीता नामक ग्रंथ है। उसमें ऐसा दिव्य ज्ञान है कि 'जन्मता-मरता शरीर है, सुखी-दुःखी मन होता है, निश्चय-अनिश्चय बुद्धि करती है और मैं अमर आत्मा हूँ। दुनिया में ऐसी कोई फाँसी नहीं बनी है, जो मुझे मार सके।' इसी ज्ञान को पाकर सभी वीर सहर्ष मृत्यु को अंगीकार कर लेते हैं।''

फिर अंग्रेज शासन के द्वारा आदेश भेजा गया कि : ''गीता की सभी प्रतियाँ जप्त कर लो और गीता के लेखक को भी कैद कर लो।''

भारत के तो घर-घर में गीता होती है, उसे कैसे जप्त करते और गीताकार श्रीकृष्ण को गिरफ्तार करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। अतः वे न गीता ही जप्त कर सके, न ही गीताकार को कैद कर सके। अनेकों वीरों की कुर्बानियों के फलस्वरूप १५ अगस्त, १९४७ के दिन भारत आजाद भी हो गया।

...लेकिन क्या भारत को वास्तविक आजादी मिली ? बाहर से भारत भले आजाद कहा जाये, किन्तु भीतर से भारतवासी खोखले हुए जा रहे हैं। गीता के दिव्य ज्ञान को, भारतीय संस्कृति की गरिमा को भूलते जा रहे हैं और पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध में फँसकर अपने तन-मन-धन को बरबाद किये जा रहे हैं। पान-मसाला, तम्बाकू-गुटखा, बीड़ी-सिगरेट आदि व्यसनों से ग्रस्त होकर एवं चलचित्रों के पीछे अपने समय-शक्ति का व्यय करके भारत के युवान युवानी में ही बूढ़े हुए जा रहे हैं। भारत के नागरिक अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी को छोड़कर विदेशी भाषा में बात करना एवं अपने बच्चों को भी अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ाना अपना गौरव समझते हैं। क्या यही सच्ची आजादी है ?

जो दिनभर मेहनत-मजदूरी करते हैं उन्हें अपना पेट भरना भी मुश्किल हो रहा है एवं दूसरी ओर लोगों का शोषण करके विदेशों में रूपयों की थप्पियाँ जमा हो रही हैं। क्या यही सच्ची आजादी है ?

यदि आपकी गाड़ी के एक पहिये में अधिक हवा भर दी जाए और दूसरे पहिये में बिल्कुल हवा न हो तो क्या गाड़ी का संतुलन रह सकता है ? ऐसा ही यदि समाज में भी चलता रहा तो क्या आगे जाकर समाज की गाड़ी भी संतुलित रह पायेगी ? क्या ऐसी परिस्थिति विद्रोह, दुःख एवं अशांति को जन्म नहीं देगी ?

आपके शरीर का एक अंग पुष्ट है और दूसरा अंग रोगी है तो आप दूसरे अंग को भी पुष्ट करनें की कोशिश करते हो। इसी प्रकार समाज के दुर्बल अंग को पुष्ट करने की कोशिश करनी चाहिए न कि दुर्बल बनाना चाहिए। किन्तु हो रहा है इससे विपरीत। जिनके

पास पद है, सत्ता है वे लोग मौज कर रहे हैं और सीधा-सादा जीवन जीनेवालों को ज्यादा कष्ट उठाना पड़ रहा है। ऐसा एकदम लम्बा फासला किसी भी देश, समाज एवं मानवता के लिए बिल्कुल हितकारी नहीं है। इसमें भविष्य अंधकारमय नजर आ रहा है और बाहर से आजाद दिखता हुआ भारत भीतर से खोखला होता जा रहा है।

इस खोखलेपन को तभी दूर किया जा सकता है जब प्रत्येक भारतवासी अपने अतीत के गौरव को पहचाने, ऋषि-मुनियों के दिव्य ज्ञान को अपनाए, विषय-विकारों के दलदल में फँसने की जगह पर संयम एवं सदाचार को अपनाए, गीता के दिव्य ज्ञान को आत्मसात् करने का प्रयास करे एवं संतों के पास से असली आजादी का ज्ञान पाकर भारत को असली आजादी दिलाने का प्रयास करे।

छोटी-छोटी मुसीबतों से घबरा जाना, अपमान की परिस्थिति में चित्त का अशांत हो जाना या मृत्यु का झटका आने पर काँपने लगना- ये सब गुलामी के लक्षण हैं। माया की इस गुलामी से छूटने के लिए सद्गुरु एवं संतों का सत्संग-सान्निध्य पाकर अपने निज स्वरूप के ज्ञान को प्रगटाना एवं चौरासी लाख जन्मों के बंधन से छूटना- यही जीव की सच्ची आजादी है।

जिस बात से आपका शरीर, मन एवं बुद्धि कमजोर होते हों, वह बात सत्य नहीं हो सकती, शाश्वत नहीं हो सकती। आपका तन तन्दुरुस्त, मन प्रसन्न एवं बुद्धि परमात्मा में अचल एवं दृढ़ रहे- यही सच्ची आजादी पाना जरूरी है।

आजादी के इस पैगाम को सुननेवालों ! आप वास्तव में आजाद ही हो किन्तु आपके दुर्बल विचार, दुर्बल वासनाएँ एवं दुर्बल बनानेवाले संस्कार ही आपको बाँधे हुए हैं। अतः दूर कर दो इन दुर्बल विचार एवं वासनाओं को और प्रार्थना करो कि :

'हे गीतानायक श्रीकृष्ण ! हे आत्मवेत्ता संतों ! आपकी सच्ची आजादी दिलानेवाली ब्रह्मज्ञान की दिव्य वाणी हमारे दिल में उतर जाये- ऐसी कृपा करना... संसार के विकारी आकर्षणों से संभलकर हम निर्विकारी नारायणस्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाएँ- ऐसा हमारा सौभाग्य बना देना।'

हे भारतवासियों ! उठो, जागो एवं अपनी असली आजादी की ओर कदम आगे बढ़ाओ। विषय-विकारों के आगे दीन-हीन बनने के लिए आपका मनुष्य-जन्म नहीं हुआ है वरन् विषय-विकारों के सिर पर पैर रखकर परब्रह्म परमात्मा के परम सुख को पाने के लिए, जन्म-मरण के चक्र से आजाद होने के लिए आपने मानव-जन्म पाया है। अंग्रेजों के शासन से तो आप मुक्त हो गये हो लेकिन अब आपको जन्म-मरण के चक्र से आजाद होना है। हे मेरे देशवासियों ! अपनी महिमा को जानो। अपने गौरव को पहचानो। बार-बार माता के गर्भ की यातना में मत गिरो। जिस दिन आप इस जन्म-मरण की बेड़ी से छूटकर अपने नित्य मुक्त स्वभाव का अनुभव कर लोगे, उसी दिन सच्ची आजादी भी पा लोगे। ॐ आनंद... ॐ निर्भयता... ॐ शांति...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सच्चे संत की पहचान

कई लोग भगवान और संतों की परीक्षा लेते हैं। वे संकल्प करते हैं कि : 'यदि मेरा रास्ता सच्चा है, मैं ध्यान के मार्ग पर ठीक चल रहा हूँ तो मेरा यह नारियल आप स्वीकार कर लो।' ...और नारियल अदृश्य हो जाता है।

कोई कहता है : 'हे गुरु महाराज ! यदि आप सचमुच मेरा कल्याण चाहते हैं, मुझ पर राजी हैं तो यह द्राक्ष बिना बीज की हो जाये।' ...और द्राक्ष बिना बीज की हो जाती है।

कोई कहता है : 'हे गुरु महाराज ! यदि आप सचमुच मेरे ऊपर प्रसन्न हों तो, आज मैं आपसे कोई प्रश्न नहीं पूछूँगा और मेरे प्रश्नों के उत्तर आ जायें।' ...और प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं।

इन बातों से सद्गुरुओं की, सच्चे संतों की अथवा तो अपनी भक्ति की परीक्षा नहीं होती। ये सब बातें तो हमारी एकाग्रता पर निर्भर करती हैं। जितनी-जितनी आपकी श्रद्धा होगी और चित्त एकाग्र होगा, उतना उतना आपका संकल्प सिद्ध होगा।

संतों की वास्तविक पहचान तो तब होती है, जब उनके करीब बैठने से हमारे सन्देह निवृत्त होने लगते हैं, हमारी चंचलता मिटने लगती है। उनके करीब बैठने से हमें परमात्मशांति में विश्रान्ति मिलने लगती है।

लालजी महाराज ने एक बार मुझसे प्रश्न पूछा कि : ''सच्चे संत की पहचान क्या है ?'' लेकिन मैंने उनके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। उन्होंने फिर दुबारा मुझसे लिखकर यही प्रश्न पूछा।

मैंने उनसे कहा : ''पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दो कि सच्चे शराबी की पहचान क्या है ? सच्चे जुआरी की पहचान क्या है ? सच्चे अफीमची की पहचान क्या है ? अगर सच्चे शराबी का संग मिले तो शराबी का संग करनेवाला भी शराबी के रंग में रंग जाये। सच्चे अफीमची का रंग लगे तो उसका संग करनेवाला भी अफीमची बन जाये।''

ऐसे ही सच्चे संत के संग की निशानी यही है कि उनका संग करनेवाले असंत का हृदय भी संत होने लगे।

पूरन गुरु की यही है निशानी।
लड़ गये नैना, मैं हो गई दिवानी ॥

स्वामी विवेकानन्द ने अपने अनुभव से लिखा है कि : ''यह दुनिया चमत्कारों से भरी है। बाह्य घटनाओं के चमत्कारों से व्यक्ति प्रभावित हो जाते हैं इसलिये उनको सत्य समझने में देर लगती है। आत्मज्ञानी को जानने के लिये बहुत उदार बुद्धि चाहिये।''

ज्ञानी पुरुषों के जीवन में भी चमत्कार होते हैं। ज्ञानी के जीवन में परोपकार के लिये, परहित के लिये चमत्कार होते हैं और दूसरे लोग अहं के पोषण के लिये चमत्कार करते हैं। मंत्र को सिद्ध किये हुए ऐसे बहुत-से पुरुष मिल जायेंगे, जो पलभर में ही आपके सामने कुछ भी प्रकट कर देंगे, लेकिन इससे आपको विश्रांति नहीं मिलेगी। विश्रांति तो परमात्म-तत्त्व को पाये हुए सच्चे संतों के, सद्गुरुओं के करीब बैठने पर ही मिलेगी। **('संत की पहचान' कैसेट से)**

*

महात्यागी महानुभाव

जिनके नाम पर इक्ष्वाकु वंश का नाम रघुवंश पड़ा, वे अयोध्यानरेश महाराज रघु अपनी दानप्रियता, न्यायप्रियता, विद्वत्ता एवं गुणग्राहिता के लिए चहुँ ओर विख्यात थे। वे महाराज दिलीप एवं महारानी सुदक्षिणा के प्रपौत्र थे।

महाराज रघु ने दिग्विजय कर एकछत्र राज्य प्राप्त

करके विश्वजित् यज्ञ किया। इस यज्ञ में उन्होंने संपूर्ण संपत्ति दान कर दी। यहाँ तक कि अपने संपूर्ण आभूषण एवं पात्र भी दान कर दिये। उस समय एकछत्र सम्राट रघु स्वयं मिट्टी के पात्र में भोजनादि करते थे।

ऐसे ही समय में एक बार महर्षि वरतन्तु के शिष्य स्नातक ब्रह्मचारी कौत्स गुरु की दक्षिणा के लिए धनप्राप्ति हेतु महाराज रघु के राज-दरबार में प्रविष्ट हुए। महाराज रघु ने उठकर ब्रह्मचारी का स्वागत किया एवं उपलब्ध मिट्टी के पात्र से अर्घ्यपाद्य देकर उनका पूजन किया। उसके पश्चात् आश्रम, गुरुदेव, शिक्षा-दीक्षा आदि के विषय में ब्रह्मचारी से पूछा।

ब्रह्मचारी कौत्स ने कहा : "महाराज ! सर्वत्र कुशल है। आप जैसे चरित्रनिष्ठ राजा के राज्य में प्रजा का अशुभ कैसे हो सकता है ?"

अंत में राजा ने ब्रह्मचारी के आगमन का कारण पूछते हुए कहा : "विप्रवर! मेरे योग्य कोई सेवा हो तो बताइए।"

तब ब्रह्मचारी ने कहा : "महाराज ! विद्याध्ययन समाप्त करने पर मैंने गुरुदेव से गुरुदक्षिणा के लिए निवेदन किया। तब गुरुदेव ने कहा : 'वत्स ! तुम्हारी सेवा ही मेरी गुरुदक्षिणा है। तुम्हारा कल्याण हो।'

परन्तु मैं बार-बार उनसे गुरुदक्षिणा के लिए आग्रह करता ही रहा। अंत में क्रुद्ध होकर उन्होंने कहा:

'तुम गुरुदक्षिणा देना ही चाहते हो तो चौदह सहस्र स्वर्णमुद्राएँ मुझे लाकर दो।'

मैं उसीके लिए आपके पास आया था किन्तु आपके मिट्टी के पूजा-पात्र से ही मैं जान गया कि अब आपने सब दान कर दिया है। अतः आपसे कुछ माँगना उचित नहीं है। आपका कल्याण हो। मैं किसी अन्य दाता के पास जा रहा हूँ।"

इतना कहकर वह ब्रह्मचारी उठ खड़ा हुआ। तब रघु राजा ने नम्र होकर, हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए कहा :

"हे विप्रवर! लोग कहेंगे कि वेद में पारंगत ब्रह्मचारी गुरुदक्षिणा हेतु धनप्राप्ति के लिए रघु के पास आया और निराश होकर वापस गया। मेरे निष्कलंक जीवन को इस प्रकार कलंकित न करवाएँ। आप मेरी यज्ञशाला में दो-तीन दिन अतिथि होकर अग्नि की भाँति निवास करें। मैं गुरुदक्षिणा की व्यवस्था करता हूँ।"

महाराज रघु ने यज्ञशाला में ब्रह्मचारी की समुचित व्यवस्था करवा दी। धन प्राप्त करने के लिए भूमंडल पर उन्हें एक भी ऐसा राजा न दिखाई दिया जिससे उन्होंने कर प्राप्त न कर लिया हो। दुबारा कर माँगना अन्याय एवं अधर्म था। अतः उन्होंने धनप्राप्ति के लिए कुबेर पर चढ़ाई करने का विचार करके अस्त्र-शस्त्र से सज्जित होकर अपने रथ को तैयार किया। ब्रह्ममुहूर्त होते ही कुबेर पर आक्रमण करने का निश्चय करके वे रात्रि में उसी रथ पर सो गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल प्रस्थान के पूर्व ही दौड़ते हुए कोषाध्यक्ष ने आकर निवेदन किया :

"महाराज ! रात्रि में कोषागार में स्वर्णमुद्राओं की वृष्टि हुई है एवं कोषागार स्वर्णमुद्राओं से पूरा भर गया है।"

महाराज रघु ने स्वयं जाकर देखा तो कोषागार स्वर्णमुद्राओं से परिपूर्ण था। अतः उन्होंने कुबेर पर चढ़ाई निरस्त कर दी।

राज-दरबार लगा। तमाम स्वर्णमुद्राओं का ढेर वहाँ लगा दिया गया। ब्रह्मचारी कौत्स को सम्मान-सहित बुलाकर महाराज रघु ने कहा :

"विप्रवर ! यह संपूर्ण धनराशि आपके लिए है। ऊँटों पर लदवाकर उसे ले जाइये।"

ब्रह्मचारी कौत्स ने कहा : "महाराज ! मुझे तो केवल चौदह सहस्र स्वर्णमुद्राएँ गुरुदक्षिणा के लिए चाहिए। अपने लिए मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। मैं उससे अधिक एक भी मुद्रा नहीं ले जाऊँगा।"

महाराज रघु : "विप्रवर ! यह धनराशि केवल आपके लिए ही प्राप्त हुई है। इसमें से एक भी मुद्रा अन्यत्र नहीं जा सकती। अतः आपको सभी स्वर्णमुद्राएँ ले जानी होगी।"

त्याग का विलक्षण दृश्य उपस्थित था ! दाता रघु और गृहीता कौत्स दोनों ही महात्यागी निकले। कोई भी अपना हठ छोड़ने को तैयार नहीं था। अयोध्या की सारी प्रजा निःस्पृह याचक कौत्स तथा दाता रघु की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगी।

अंत में विलंब होता देखकर राजसभा ने जब एक स्वर से ब्रह्मचारी से अनुरोध किया कि आप राजा के प्रण की रक्षा के लिए संपूर्ण धनराशि ले जाने की कृपा करें। तब उस ब्रह्मचारी कौत्स ने ऊँटों पर वह धनराशि लदवाकर गुरु वरतंतु ऋषि के श्रीचरणों में ले जाकर समर्पित कर दी।

धन्य हैं दाता रघु! धन्य है याचक कौत्स! धन्य है दोनों की जन्मदात्री भारतभूमि!

देने में सब हैं परम उदार
लेने को सब सकुचाते हैं।
सचमुच, ऐसे महापुरुष ही
जग में अमर हो जाते हैं॥

काश! आज का भारतवासी अपने पूर्वजों का यह आदर्श अपना सके!

('कल्याण' के 'चरित्र निर्माण अंक' पर आधारित)

*

आस्ते भग आसीनस्योर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः।
शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगश्चरैवेति॥

क्रियाहीन का सौभाग्य दबा पड़ा रहता है। चरित्र के पथ में उद्योगशील के लिए सौभाग्य अभिवृद्धि की ओर उन्मुख होता है। निष्क्रिय सोये हुए का सौभाग्य तो बिल्कुल विनष्ट हो जाता है। केवल आचरणशील का सौभाग्य उत्तरोत्तर बढ़ता है। अतः चरित्र-पथ पर आगे बढ़ते रहो, बढ़ते रहो। (ऋग्वेद, ऐतरेय ब्राह्मण : ३३.३.३)

*

चरन् वै मधु विन्दति चरन् स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरंश्चरैवेति॥

चरित्रशील पुरुष मधुर फलों (भोगों) को प्राप्त करता है। सूर्य की श्रेष्ठता (जगवन्दनीयता) को देखो जो अपने चरित्र के पथ से तनिक भी आलस्य नहीं करता। (सबको समभाव से प्रकाश तथा उष्मा प्रदान करता है।) अतः चरित्र-पथ पर बढ़ते रहो, बढ़ते रहो।

(ऋग्वेद, ऐतरेय ब्राह्मण : ३३.३.५)

योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

(गतांक का शेष)

देशभक्ति

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज की रग-रग में देशभक्ति समाई हुई थी। देशवासियों की कल्याण-भावना से प्रेरित होकर वे कई बार सिंधी भाषा में प्रभु से प्रार्थना करते हुए निम्नांकित पंक्तियों का गुंजन करते :

भारत जो भलो करि शाद त आबाद रखु।
अनाथनि नाथ तूं बाझ करि हाणि तूं॥
सभ जो सतार साईं प्रभु वाली सारे जग जो।
राम राचि डसि साईं दुख लाहे पाण तूं॥
वस में न आउँ डिसां तोखां वडो साईं सजो।
सुख जो भन्डारु दाता भरपुर माण तूं॥
दातारु सघ शक्तिअ वारो सुन्दर अपारु आहीं।
लीले खे लालण लाल रखु जीअ साणु तूं॥

'हे प्रभु! भारतीयों (भारत-देशवासियों) का कल्याण कर। उन्हें तू आबाद (सुखी) रख। प्रभु! तू अनाथों का नाथ है। हमारे पर दया कर। हमारी लाज रखना। लीलाशाह की एक प्रार्थना है कि हे मेरे पालन-पोषण करनेवाले! तू सदा मुझे अपने साथ रखना, सदा अपने साथ रखना।'

उच्च कोटि के देशभक्त होने के नाते वे बालकों तथा नवयुवानों में सदैव देशभक्ति का भाव भरते।

सन् १९४५ में जब सिंध असेम्बली के चुनाव हुए तब उन्होंने काँग्रेस के उम्मीदवारों को चुनाव में काफी मदद की। उस समय टंढई विभाग में रायसाहब रीझुमल हिन्दू महासभा के उम्मीदवार के रूप में खड़े थे। दूसरी ओर काँग्रेस उम्मीदवार के रूप में सेठ टहुलमल थे। हिन्दू महासभा के उम्मीदवार को हराने में डॉ. चोईथराम और दूसरे कितने ही लोग असफल हुए। पंडित जवाहरलाल नेहरू भी दूसरी तरफ के सभी विरोधी पक्षों को हराने में अच्छी तरह सफल हुए थे, किन्तु रायसाहब रीझुमल के सामने वे भी हार गये थे।

रायसाहब के जीतने की पूरी संभावना थी फिर भी उन्होंने पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के आदेश का सम्मान करते हुए सेठ टहलराम के पक्ष में हाथ ऊँचे कर दिये जिससे सेठ टहलराम बिना विरोध के विजयी हो गये। पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने रायसाहब को खूब आशीर्वाद दिये। इस ओर सेठ टहलराम को पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के लिए अगाध श्रद्धा उत्पन्न हो गयी। वे अंतिम क्षण तक पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के शिष्य बनकर रहे।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज की देशभक्ति तीन बार ज्यादा प्रकाश में आयी थी :

पहली बार तब, जब भारत की स्वतंत्रता के पूर्व इण्डियन नेशनल काँग्रेस को सुदृढ़ बनाने में पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने सदैव योगदान दिया। दूसरी बार, सिंध देश की विधानसभा के लिए जो चुनाव हुए उसमें काँग्रेस को विजयी बनाने में उनका बड़ा योगदान रहा। तीसरी बार, चीन देश ने जब भारत पर हमला किया था, तब राष्ट्र-रक्षाकोष में पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने स्वयं दान दिया था एवं दूसरे लोगों को भी उदारता से दान देने के लिए प्रोत्साहित किया था।

साहित्य-सेवा

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज को यह विश्वास था कि सत्साहित्य, धर्म एवं नीति के शास्त्र ही मानव जीवन का निर्माण करने एवं जीवन को उन्नति के पथ पर ले जानेवाले हैं। इसी कारण से वे सिंध देश में साहित्य-सेवा करने में तल्लीन हो गये। उन्होंने सिंधी साहित्य की खूब सेवा की।

उन्होंने छोटी-बड़ी पुस्तकें सिंधी भाषा में लिखवायीं। इसके अलावा दूसरी वेदान्ती पुस्तकों का भी सिंधी भाषा में अनुवाद करवाकर छपवाना शुरू किया।

नीतिशास्त्र की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'सार-सूक्तावली', 'स्वामी रामतीर्थ का जीवनचरित्र' एवं 'सफलता की कुंजी' को गुरुमुखी भाषा में छपवाकर प्रसिद्ध किया। उस वक्त सिंध में गुरुमुखी भाषा का काफी प्रचार था।

प्रो. गोकुलदास भागिया के साथ 'वेदान्त प्रचार मंडल' की स्थापना की, जिसके द्वारा एक उच्च कोटि की मासिक पत्रिका 'तत्त्वज्ञान' को प्रकाशित करना शुरू किया। उसमें वेदान्त पर व्याख्यान दिये गये थे। इसके अलावा 'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण', 'सिद्धांतसार', 'विचारसागर', 'पंचीकरण', 'रामवर्षा', 'विवेकचूड़ामणि' एवं वेदान्त के दूसरे कई उच्चस्तरीय ग्रंथों को प्रकाशित किया। 'विवेकचूड़ामणि' एवं 'विचारसागर' जैसे वेदान्ती ग्रंथों को केवल सिंधी भाषा में ही नहीं, वरन् गुरुमुखी भाषा में भी प्रकाशित करवाया।

पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज की प्रेरणा से अजमेर में सिंधी भाषा में 'आत्मदर्शन' नामक मासिक सामयिक भी प्रकाशित होने लगा जिसके संपादक श्री प्रभुदासजी ब्रह्मचारी थे।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज उच्च कोटि के कवि और चिन्तक भी थे। उन्होंने सिंधी भाषा में कितनी ही कविताएँ भी रचीं। 'लीलाशाह शतक' में पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज द्वारा रचित सौ कविताओं, श्लोकों एवं भजनों का समावेश है।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने स्वयं कभी किसी स्कूल या कॉलेज में शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, फिर भी उन्हें साहित्य की सच्ची परख थी। वे जानते थे कि जीवन पर सत्साहित्य का बड़ा गहरा असर होता है। साहित्य मनुष्य के जीवन में, समाज में एवं

देश में नई जागृति लाकर, लोगों को सच्ची राह बताकर, उन्नति के पथ पर चलने के लिए प्रेरित करता है।

उनके विचारानुसार 'सच्चा साहित्य वही है जिसमें सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के गीत गूँजते हों।' सत्यम् अर्थात् जो निजस्वरूप का मार्ग बताये। शिवम् अर्थात् जो कल्याणकारी एवं उच्च विचारोंवाला हो। सुन्दरम् अर्थात् जो सुंदर जीवन जीने की कला बताये। ऐसा साहित्य ही वास्तव में मानव जीवन का अमूल्य खजाना है। उन्होंने समाज की सेवा के लिए ऐसी ही पुस्तकों का प्रकाशन किया था।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज सिंध के अलग-अलग गाँवों एवं शहरों में जाकर प्रवचनों के माध्यम से वेदान्त के गहन रहस्यों को सरल भाषा में आमजनता तक पहुँचाते। उनका वेदान्त-प्रचार केवल भाषा में ही नहीं, वरन् उनके जीवन के कण-कण में समाया हुआ था। उन्होंने लोगों को समझाया कि जीवन में लाया गया वेदान्त का ज्ञान मनुष्य के संशयों को दूर करके उसे नारायण का अवतार बना देता है।

गर्मियों के दिनों में जब पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज नैनिताल के जंगलों में एकांतवास के लिए जाते तब अच्छी-अच्छी पुस्तकें इकट्ठी करके उनकी एक गठरी बनाकर सिर पर रखकर चलते। नैनिताल के पर्वतों से उतरकर आस-पास के पर्वतीय प्रदेशों में स्थित अलग-अलग गाँवों में जाते। घर-घर घूमकर गरीब लोगों को थोड़ा सत्संग सुनाते, प्रसाद बाँटते एवं अधिकारी, योग्य लोगों को पढ़ने के लिए पुस्तक देते हुए कहते :

''भाई ! आज शुक्रवार है। आनेवाले शुक्रवार के दिन मैं फिर इसी गाँव में आऊँगा तब यह पुस्तक ले जाऊँगा और दूसरी पुस्तक दे जाऊँगा। तब तक इसे पढ़ लेना और जो अच्छा लगे उसे याद रखना, लिख लेना। पूरी पुस्तक दो-तीन बार जरूर पढ़ना। इससे तुम्हें बहुत अच्छा ज्ञान मिलेगा, भगवान में प्रेम जगेगा, आत्मा का कल्याण होगा।''

इस प्रकार अलग-अलग अधिकारवाले लोगों को अलग-अलग तरह से प्रोत्साहित करते हुए पूरे गाँव में पुस्तक बाँट आते। दूसरे दिन दूसरे गाँव में जाते। इस प्रकार सत्संग एवं साहित्य का सदाव्रत चलाते। कहीं सप्ताह तो कहीं पंद्रह दिन पूरे होते तो पुनः उसी गाँव में जाकर पहले दी गयी पुस्तकें वापस लेकर, दूसरी पुस्तकें सप्ताह-पंद्रह दिन के लिए पढ़ने के लिए देते। सत्संग के दो मीठे वचन सुनाकर दुःखी, निराश एवं हतोत्साहित लोगों के जीवन में उत्साह भर देते। इस प्रकार वे मानो सत्संग का चलता-फिरता एक अनोखा पुस्तकालय ही चलाते।

उन करुणावान् महापुरुष की कैसी करुणा ! ... उस जमाने में तो सड़कों एवं वाहनों की भी सुविधा नहीं थी, फिर भी ८०-८५ वर्ष की उम्र तक पहाड़ी प्रदेश में सिर पर पुस्तकों की गठरी उठाकर पैदल चलते ! एक-एक व्यक्ति के जीवन में रस लेकर उसे सत्संग की तरफ मोड़ते। इस प्रकार साहित्य-सेवा के लिए उन्होंने जो कठोर परिश्रम किया, वह अद्भुत था। जनहित के कार्यों में साहित्य-सेवा के द्वारा पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज का अमूल्य योगदान रहा है।

समाज के तारणहार बने

१५-अगस्त १९४७ के दिन संत-महात्माओं के शुभ संकल्पों एवं भारतवासियों के पुरुषार्थ से, भारत अंग्रेजों की दासता से मुक्त हुआ। महात्मा गाँधी एवं दूसरे देशभक्तों का स्वप्न साकार हुआ। देश में चारों ओर प्रसन्नता की लहर छा गयी... परंतु दूसरी ओर इसीके साथ दुःखद घटना भी बनी।

अंग्रेज भारत में राज्य करते-करते हिन्दू एवं मुसलमान इन दोनों में जातिभेद बताकर, आपसी फूट डालकर उन्हें लड़ाते थे। भारत छोड़ते समय अंग्रेज भारत एवं पाकिस्तान ये दो भाग करके, देश के टुकड़े करके भारत के लिए अशांति, दुःख एवं मुसीबतों की आग जलाते गये। मलिन वृत्तिवाले मुसलमान हिन्दुओं पर खूब जुल्म ढाने लगे। वे लोग हिन्दू एवं सिक्खों को लूटते, बेइज्जती करते, मारपीट करते, खून-खराबा करते, बच्चियों एवं

स्त्रियों की इज्जत लूटते, उन्हें उठा ले जाते।

हिन्दुओं की माल-मिल्कियत, इज्जत एवं धर्म की रक्षा का कोई उपाय न रहा। ऐसी खराब हालत में हिन्दुओं को पाकिस्तान छोड़कर भारत में आना पड़ा। पूर्व बंगाल के हिन्दू लोगों ने पश्चिम बंगाल एवं पश्चिम पंजाब के हिन्दुओं ने पूर्व पंजाब में आकर फिर से नयी जिंदगी शुरू की। उत्तर एवं दक्षिण की सीमा में रहनेवाले लोग भी पूर्व पंजाब एवं दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में आकर रहने लगे। खास करके बलूचिस्तान एवं सिंध के हिन्दुओं को काफी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। पूर्व पंजाब, बिहार एवं दूसरे शहरों में से मुसलमानों ने सिंध एवं बलूचिस्तान पर चढ़ाई करके हिन्दुओं की जमीन-जायदाद पर कब्जा कर लिया। इसलिए विवश होकर ये लोग भी निराश्रित बनकर भारत में आश्रय लेने के लिए आये।

इन लोगों के रहने के लिए भारत सरकार ने अलग-अलग जगहों पर केम्प बना दिये जिससे वे निश्चिंतता की साँस ले सकें। अपनी जान बचाने के लिए, डर के मारे एक ही कुटुंब के व्यक्ति अलग-अलग जगह बँटकर दूर हो गये। अनजान भारत में भागकर आये हुए हिन्दुओं के पास रहने के लिए मकान नहीं, खाने के लिए अन्न का दाना नहीं, कमाने के लिए नौकरी-धंधा नहीं... ऐसी स्थिति में इन लोगों को प्रेम, स्नेह, हमदर्दी एवं सहारे की सख्त जरूरत थी।

ऐसी विकट परिस्थिति में पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज उन लोगों के रक्षणहार, तारणहार एवं दिव्य प्रकाश के स्तंभरूप बने। पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज उन लोगों को समझाते कि 'दुःख एवं मुसीबत कसौटी करने के लिए ही आते हैं। ऐसे समय में धैर्य एवं शान्ति से काम लेना चाहिए।'

लोगों की दयाजनक स्थिति देखकर, उन्होंने रात-दिन देखे बिना तत्परता से लोकसेवा शुरू कर दी। कभी दिल्ली, जयपुर, अलवर, खेड़थल, जोधपुर तो कभी अजमेर, अमदावाद, मुंबई, बड़ौदा, पाटण वगैरह स्थलों पर जाकर वे निःसहाय, दुःखी लोगों के मददगार बने। (क्रमशः)

जाको राखे साँईया...

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

जिस सर्वसमर्थ सत्ताधीश ने इस सृष्टि का सर्जन-पालन-पोषण किया है, उसकी इच्छा के बिना कोई किसीका बाल तक बाँका नहीं कर सकता।

बिहार के मुंगेरनगर की यह सत्य घटना है :

मुंगेरनगर में अचानक भूकंप आ गया। कई ईमारतें जमीनदोस्त हो गयीं। अनेक लोग दब मरे। भूकंप के पश्चात् सरकारी तंत्र एवं समाजसेवी संस्थाएँ अपने-अपने ढंग से सेवा में लग गईं।

जमीन में दबे हुए लोगों को जब निकाला गया तब कई लोग मृतक निकले, कई अधमरे और कई लोग फ्रेक्चरवाले निकले। एक दो दिन के बाद तो केवल शव-ही-शव निकले और यह स्वाभाविक ही था।

खुदाई करके मलवा हटाने का कार्य चल रहा था। खुदाई करते-करते १५ दिन के बाद एक जगह पर भीतर से आवाज आई :

''भाइयों ! जरा सावधानी से...''

खोदनेवालों ने अपने मुखिया से जाकर कहा तो वह बोल उठा : ''क्या पागल हुए हो ! १५ दिन के बाद जमीन के भीतर से कहीं जीवित मनुष्य की आवाज आ सकती है ?''

फिर वह स्वयं गया तो सचमुच आवाज आ रही थी। उसने सावधानी से खुदवाया तो पैर का तलुआ दिखने लगा। धीरे-धीरे शरीर के अन्य भाग भी दिखे और फिर पूरा शरीर बाहर निकाल लिया गया।

१५ दिन के बाद भी वह मनुष्य जिंदा निकला और वह भी तंदुरुस्त ! किसीको विश्वास नहीं हो रहा था किन्तु प्रत्यक्ष देखकर अविश्वास भी कैसे कर सकते थे ? थोड़ा स्वस्थ होने पर उससे पूछा गया :

''भैया ! इस भयंकर भूकंप में जमीन में दबकर १५ दिन के बाद भी तुम जीवित कैसे रह गये ?''

तब उसने बताया : ''मैं केले बेचनेवाला गरीब आदमी हूँ। एक भवन की छाया में मैं बैठा था। अचानक जोरों का झटका लगा। मैं कहाँ पहुँच गया, मुझे पता ही नहीं चला। जब उलटा होकर गिर पड़ा था तब मैंने हृदयपूर्वक प्रार्थना की थी कि : 'हे प्रभु ! मैं तो तेरी शरण में हूँ। तेरे हाथ समर्थ हैं। तू चाहे तो मेरी रक्षा कर सकता है। अपने बच्चे को तू ही जीवन दे सकता है...' दब जाने के कारण मेरी श्वास घुट रही थी। इतने में एक दूसरा झटका लगा और जमीन में एक दरार पड़ी। वहाँ से हवा आनी शुरू हो गयी। केले का टोकरा मेरे साथ ही गिरा था। मैंने सोचा : 'केले खाकर जीऊँगा लेकिन बिना पानी के क्या होगा ? हे मालिक ! अब तू ही जान। मैं कुछ नहीं जानता।' इतने में तीसरा झटका लगा और एक टंकी फट गयी। उसमें से पानी बहकर मेरे पासवाले खड्डे में भर गया। मैं रोज केला खाता गया और पानी पीता गया। सूर्य की छोटी-सी किरण दरार में से मुझे मिलती थी। आज केले भी खत्म हो गये थे और पानी भी नहीं रहा था। मैंने सोचा : अब क्या होगा ? फिर मैंने प्रभु से प्रार्थना की : 'हे दयालु ! तू दया करे तो मैं बच सकता हूँ।' इतने में उस दयालु परमेश्वर ने आपकी टुकड़ी को प्रेरणा की और आप खोदते-खोदते मेरे नजदीक आ गये। फिर मैंने आवाज दी : 'भैया ! संभालकर खोदो।' आपने संभालकर खोदा और मैं सुरक्षित बाहर निकला। यह सब उसी परमेश्वर की करुणा है।''

कैसी अद्भुत घटना ! भूकंप के एक के बाद एक झटके ! जमीन के भीतर १५ दिन तक दबा हुआ आदमी ! केले एवं पानी से उसका पोषण ! दरार से सूर्य की किरण का प्राप्त होना ! पानी एवं केले पूरे होते ही खोदनेवालों का आगमन और उसे जीवित बाहर निकाला जाना ! एक के बाद एक आश्चर्य ! परन्तु उस सर्वसमर्थ सत्ताधीश के लिए असंभव कुछ भी नहीं है। यदि वह किसीको जीवित रखना चाहे तो दुनिया की कोई ताकत उसको मार नहीं सकती।

ऐसी ही एक घटना ईरान की है :

ईरान में दक्षिण पूर्व करमान प्रांत के सिरजन कस्बे में ५५ वर्षीय महिला खादिजे ईरान नेजाद को उसके रिश्तेदारों ने जान से मार डालने के लिए एक गहरे एवं सूखे कुएँ में धकेल दिया और ऊपर से एक चट्टान गिरा दी ताकि उसकी मौत सुनिश्चित हो जाये।

लेकिन सौभाग्य से वह चट्टान नेजाद को नहीं लगी और वह बाल-बाल बच गई।

ईरान के दैनिक अखबार 'ईरान न्यूज' के अनुसार नेजाद २२ दिन तक एक कपड़े को चूस-चूसकर जिंदा रही थी। वह कपड़ा कुएँ की दरार से बूँद-बूँद रिसते पानी से भीग रहा था। २२ दिन के बाद वहाँ से गुजरते हुए एक किसान ने नेजाद की कराह सुनी और उसे बाहर निकाला। बाद में उसे अस्पताल में भर्ती कराया गया जहाँ उसका स्वास्थ्य अच्छा होने लगा।

यह घटना सान्ध्य टाइम्स, नई दिल्ली, १३ अक्तूबर १९९७ में छपी थी।

ठीक ही कहा है कि :

जाको राखे साँईया मार सके ना कोई।
बाल न बाँका कर सके जो जग वैरी होई॥

गुजराती में भी कहा गया है कि :

जेने राम राखे तेने कोण चाखे ?

जिसकी रक्षा स्वयं प्रभु कर रहे हों, उसे कौन छू सकता है ? ...और प्रभु किसीका तन लेकर उसे नया तन देना चाहते हों तो उन्हें कौन रोक सकता है ?

भावो हि विद्यते देवो। मनुष्य का भाव जितना दिव्य होता है, उतना ही उसका कर्मफल भी दिव्य होता है। जैसे, किसीके कार्यालय में किसी माई का झाड़ू लगाना नौकरी है। घर में माँ, बहन, भाभी का झाड़ू लगाना कर्त्तव्य है किन्तु गुरुआश्रम में शबरी भीलनी का झाड़ू लगाना... वह तो ईश्वर की पूजा बन गया था !

मंत्र से सिद्धि

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मंत्रे तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे भेषजे गुरौः ।
यादृशीर्भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशीः ॥

मंत्र में, तीर्थ में, ब्राह्मण में, देव में, ज्योतिष में, औषधि में और गुरु में जिसकी जैसी भावना होती है, उसको वैसी ही सिद्धि होती है ।

अमदावाद नगर का नाम जिस समय कर्णावती था उस समय की बात है । कर्णावती में एक सिद्ध पुरुष हो गये । उनका नाम था माणिकनाथ योगी । उन्होंने अपनी मंत्रसिद्धि के बल से बहुत-से चमत्कार दिखाये थे ।

साबरमती नदी की एक शाखा जहाँ से बहती थी, उसके एक किनारे पर ही माणिकनाथ योगी का छोटा-सा आश्रम था । एक दिन अहमदशाह घूमता-घामता उस स्थान पर आया और उसे वह स्थान पसन्द आ गया । उसने तुरन्त ही अपने मंत्रियों को आज्ञा दी : ''यहाँ निर्माणकार्य शुरू किया जाय ।''

मंत्रियों ने बादशाह की आज्ञा का पालन करते हुए माणिकनाथ योगी के आश्रम को भी निर्माणकार्य की सीमा में लेकर दीवार चुनवाना प्रारम्भ करवा दिया । मजदूर लोग पूरा दिन दीवार बनाने के कार्य में लगे रहते ।

यह देखकर माणिकनाथ योगी के मन में आया :

'इस बादशाह को इतना अभिमान ! मुझसे बिना पूछे ही मेरे आश्रम को घेरकर इसने दीवार बनवाना शुरू कर दिया ? आखिर यह बादशाह अपने-आपको क्या समझता है ?'

माणिकनाथ योगी साबरी मंत्र सिद्ध कर चुके थे । मजदूर लोग दिन भर दीवार चुनने का काम करते और माणिकनाथ योगी दिन भर गुदड़ी सिलते रहते । शाम होते ही वे जैसे ही गुदड़ी में से धागा खींचते, सिली हुई गुदड़ी खुल जाती वैसे ही उधर चुनी हुई दीवार धड़ाम से गिर जाती । यह उनके साबरी मंत्र का ही प्रभाव था ।

मंत्र जब सिद्ध हो जाता है तब संकल्प को पूरा होने में तनिक भी देर नहीं लगती ।

मान लो, आपको अमदावाद से भावनगर जाना है । अगर आप कार द्वारा जायें तो आपको चार घंटे लगेंगे और हवाई जहाज से जायें तो १५-२० मिनट लगेंगे । अगर मन के संकल्प द्वारा जायें तो क्या दस पाँच सेकन्ड भी लगेंगे ? नहीं । इसी समय मन द्वारा पहुँच जाएँगे । संकल्प किया नहीं कि मन भावनगर पहुँचा नहीं । हमारा मन जितना एकाग्र होता है उतना ही उसमें सामर्थ्य आता है ।

बादशाह को बार-बार दीवार गिरने की बात बताई गई । जाँच करने पर पता चला कि माणिकनाथ योगी अपनी सिद्धि के बल से ही दीवार गिरा देते हैं । यह जानकर बादशाह को बहुत चिंता होने लगी कि अब माणिकनाथ योगी को ऐसा करने से किस प्रकार रोका जाये ? बादशाह के एक चालाक वजीर ने इसका हल निकाला । वह बादशाह से बोला :

''जहाँपनाह ! आप चिंता मत करो । हम इस समस्या का हल अवश्य निकाल देंगे ।''

वजीर ने एक युक्ति खोज निकाली और बादशाह से बोला : ''मैं माणिकनाथ योगी के आश्रम में जाकर कुछ दिन उनका शिष्य बनकर रहूँगा और उनसे घुल-मिलकर उनकी कमजोरी को जानने का प्रयास करूँगा ।''

वह वजीर किसी तरह से माणिकनाथ योगी के आश्रम में दाखिल होकर उनका शिष्य बनकर रहने लगा । अन्दर-ही-अन्दर वह गुप्त रूप से योगी की कमजोरी के बारे में खोजबीन करता रहता । लेकिन योगी की कमजोरी क्या है इस बात का उसे आसानी से पता न चल सका । फिर भी उस चालाक वजीर ने

खोजते-खोजते आखिर एक दिन माणिकनाथ योगी की एक कमजोरी खोज ही ली। उसे पता चला कि एक बार माणिकनाथ के गुरु ने उनसे कहा था : ''तेरा बल और सामर्थ्य तब तक ही रहेगा कि जब तक तुझमें अहंकार नहीं आएगा। अहंकार आने पर तेरा सारा बल और सामर्थ्य एकदम ही लुप्त हो जायेगा।''

यह राज़ जानकर वह वजीर बादशाह के पास गया और उसने बादशाह को सारी बात बताई। फिर बादशाह को आश्वासन देते हुए उसने कहा : ''आप चिंता न करें। मैं सारी व्यवस्था कर दूँगा।''

वह पुनः माणिकनाथ योगी के आश्रम में जाकर ऐसी चेष्टाएँ करने लगा, जिससे माणिकनाथ योगी को अहंकार आ जाये।

वह वजीर योगी से बोला : ''हे गुरुदेव ! आप कितने बड़े हैं ! आपके नाम से तो सब काँपते हैं। आप तो शक्ति में भगवान से भी बड़े हैं । आप इतने सामर्थ्यवान हैं कि आपके संकल्पमात्र से ही दीवारें गिर जाती हैं। आपके आगे तो बादशाह का बल तुच्छ है। आप जब चाहें तब दुनिया बना सकते हैं और जब चाहें तब दुनिया मिटा सकते हैं।''

इस प्रकार की चिकनी-चुपड़ी बातें करके वह माणिकनाथ योगी के अहं का पोषण करने लगा। माणिकनाथ योगी ने भी तो अभी केवल साबरी मंत्र ही सिद्ध किया था, आत्म-साक्षात्कार की स्थिति तक तो वे अभी पहुँचे नहीं थे। अधूरा घड़ा को छलकता ही है न !

अध जल गगरी छलकत जाये।

माणिकनाथ योगी वजीर की बातों में आ गये। वे बोले : ''ये तो कुछ भी नहीं है। अभी तो मेरी इतनी सिद्धियाँ हैं, जिन्हें तुमने देखा ही नहीं है।''

वजीर समझ गया कि अपने जाल में योगी को फँसाने में वह कामयाब हो गया है । वह पुनः थोड़ी भूमिका बाँधकर योगी से बोला :

''हे गुरुदेव ! अहमदशाह अपनी गलती के लिये बहुत शर्मिन्दा हैं और आपसे क्षमा माँगने के लिये आना चाहते हैं। अतः आपसे प्रार्थना है कि आप उनके लिये थोड़ा-सा समय निकालें ताकि वे आपके चरणस्पर्श करके अपनी गलती का प्रायश्चित्त कर सकें।''

माणिकनाथ योगी ने शिष्य के वेष में छिपे उस वजीर को सहमति दे दी।

वजीर ने बादशाह के पास यह सूचना भिजवाई। बादशाह तुरन्त ही माणिकनाथ योगी के आश्रम में पहुँचा और उनके चरणों में गिरकर बोला :

''हे महाराज ! मैं अपनी गलती के लिये बहुत शर्मिन्दा हूँ। मुझे आपकी शक्ति का ज्ञान नहीं था। आप जैसे महान सिद्ध योगी के हृदय को मैंने ठेस पहुँचाई इसके कारण मुझे रात भर नींद नहीं आती है। हर समय मुझे बस आप-ही-आप दिखाई देते हैं। धिक्कार है मुझ पर !''

राजनीति में किस समय क्या बोलना चाहिये यह सब राजा को ज्ञात ही होता है। अतः बादशाह ने भी माणिकनाथ योगी को अपने शब्दों के जाल में फँसा लिया। बादशाह बोला : ''महाराज ! मेरी बहुत इच्छा है कि आप मुझे कोई चमत्कार दिखाएँ।''

अहमदशाह के बार-बार प्रार्थना करने पर योगी माणिकनाथ उसे चमत्कार दिखाने को तैयार हो गये और बोले :

''देखो, यह सामने लोटा पड़ा है। मैं योगबल से उसमें प्रवेश कर सकता हूँ।'' ऐसा कहकर वे अपनी सिद्धि के बल से सूक्ष्म होकर लोटे में प्रविष्ट हो गये।

बादशाह और वह चालाक वजीर इसी मौके की फिराक में थे। बादशाह ने तुरन्त ही वजीर को हुक्म दिया : ''लोटे का मुँह बंद करके उसे तुरन्त जमीन में गाड़ दो।''

माणिकनाथ ने जब यह सुना तो उन्हें सब बातें समझ में आ गईं। उनके अहंकार ने आज उन्हें मौत के निकट पहुँचा दिया। लोटे के अन्दर उनका दम घुटने लगा और अपने बचाव के लिये वे छटपटाने लगे। बादशाह ने तो उस मौके का फायदा उठाया क्योंकि जो वक्त का फायदा न उठाये वह बादशाह किस बात का ? माणिकनाथ योगी अन्दर से चिल्लाये : ''मुझे बाहर निकालो नहीं तो मैं तुम्हारा सारा राज्य नष्ट-भ्रष्ट कर दूँगा।''

इस पर वजीर कपटपूर्वक मुस्कुराते हुए बोला :

''हे योगीराज ! आप ऐसा कर ही नहीं सकते,

क्योंकि आपके गुरु ने आपको श्राप दिया था कि अहंकार आते ही आपका सारा बल चला जायेगा। अब आप जो भी करना चाहो, करके देख लो।''

तब योगी ने अपनी विद्या का स्मरण किया लेकिन उनकी सारी विद्या विस्मृत हो गयी थी। उनकी संकल्प-शक्ति भी नष्ट हो गई थी। फिर जब उन्होंने देखा कि अब कुछ होनेवाला नहीं है तो उन्होंने अपने गुरुदेव का स्मरण किया। गुरुदेव ने उन्हें अन्तःप्रेरणा दी :

''बेटा ! अब मुसीबत में पड़ा है... मैंने तुझे पहले ही सावधान किया था कि अहंकार आते ही तेरी सारी शक्ति चली जायेगी। तुझे अपने योगबल का दुरुपयोग करके अहमदशाह को तंग नहीं करना चाहिए था। उसकी दीवार के निर्माणकार्य में विघ्न नहीं डालना चाहिए था। उस बादशाह ने अपने पूर्व जन्म में साधु-संतों और फकीरों की बहुत सेवा की है और संत-महापुरुषों की सेवा करनेवाला व्यक्ति समय पाकर यशस्वी होता ही है। वर्षों तक उस अहमदशाह का यश कायम रहेगा और उसके नाम पर ही यह नगर प्रसिद्ध होगा। अतः तू भी इसे आशीर्वाद दे दे। इस समय मैं शिवलोक में हूँ और तेरा भी उचित समय आ गया है अतः तू भी यहाँ आ जा।''

तब माणिकनाथ योगी ने पश्चात्ताप करते हुए अपने गुरु से माफी माँगी और बोले : ''हे गुरुदेव ! जैसी आपकी आज्ञा।''

फिर वे योगी बादशाह से बोले : ''मैं आपको आशीर्वाद देता हूँ कि आपके नाम से यह नगर प्रसिद्ध होगा। इस नगर के कारण शताब्दियों तक आपके नाम का यशोगान होता रहेगा। अब आप अपनी दीवार बना सकते हो। मैं उसमें कोई विघ्न नहीं डालूँगा। आप सदा खुशहाल रहोगे।''

यह सुनकर बादशाह की क्रूरता कम हो गयी। उसने फौरन लोटे को खोलकर माणिकनाथ योगी को बंधनमुक्त कर दिया और क्षमा माँगने के लिये उनके चरणों में गिर पड़ा। संतों का हृदय तो अत्यंत कोमल होता है। अगर वे नाराज हो भी जायें तो क्षण भर में ही प्रसन्न भी हो जाते हैं। योगी ने बादशाह को उसी क्षण क्षमा कर दिया और फिर उसे आशीर्वाद देते हुए बोले :

''यशस्वी भव। चिरंजीवी भव। अच्छा ! तो अब हम जाते हैं।'' ऐसा कहकर माणिकनाथ योगी अपने प्राणों को ऊपर चढ़ाकर शरीर छोड़कर शिवलोक की ओर प्रस्थान कर गये। उनके जाने के बाद बादशाह के मन में विचार आया कि मुझे कुछ ऐसा करना चाहिये जिससे कि माणिकनाथ योगी का नाम सदा के लिये अमर हो जाये।

यह सोचकर उसने, जहाँ माणिकनाथ योगी का आश्रम था उसी जगह पर एक चौक बनवाया। वही स्थान आज भी 'माणिकचौक' के नाम से प्रसिद्ध है। फिर अहमदशाह के नाम पर ही कर्णावती नगर का नाम अहमदाबाद पड़ा।

इस सत्य घटना से हमें यह शिक्षा मिलती है कि मंत्रजप के प्रभाव से हम रिद्धि-सिद्धियों के स्वामी बन सकते हैं और उन सिद्धियों का दुरुपयोग करने पर वे शक्तियाँ हमसे छिन भी जाती हैं। जैसा कि माणिकनाथ योगी के साथ हुआ।

अतः मंत्रजप का प्रयोग यश कमाने के लिए या किसीका अनिष्ट करने के लिए नहीं करना चाहिए वरन् परमात्मा को पाने के लिए ही, आत्म-साक्षात्कार करने के लिए ही करना चाहिए।

मँगतों से क्या माँगना ?

एक बार अकबर नमाज पढ़ रहा था। इतने में एक फकीर वहाँ आये। अकबर को प्रार्थना करता देखकर वे फकीर उलटे पाँव ही लौटने लगे।

यह देखकर अकबर के सेवकों ने उन्हें रोका। जब अकबर नमाज पढ़कर उठा तब सेवकों ने पूरी बात बता दी। सब सुनकर अकबर बोला :

''क्या बात है ? आप क्यों आये थे ?''

फकीर : ''आया तो था किसी सेवाकार्य के लिए कुछ माँगने, किन्तु यहाँ आकर जब स्वयं आपको ही परवरदिगार से माँगते हुए देखा तो मैंने सोचा : माँगनेवाले से क्या माँगना ? जो सबको देता है उसी परवरदिगार से ही मैं क्यों न माँगूँ ?''

विदुषी गार्गी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ब्रह्मवादिनी विदुषी गार्गी का नाम वैदिक साहित्य में अत्यंत विख्यात है । उनका असली नाम क्या था, यह तो ज्ञात नहीं है किन्तु उनके पिता का नाम वचक्नु था । अतः वचक्नु की पुत्री होने के कारण उनका नाम 'वाचक्नवी' पड़ गया । गर्ग गोत्र में उत्पन्न होने के कारण लोग उन्हें 'गार्गी' कहते थे । यह 'गार्गी' नाम ही जनसाधारण में प्रचलित हुआ ।

बृहदारण्यक उपनिषद् में गार्गी के शास्त्रार्थ का प्रसंग वर्णित है :

विदेह देश के राजा जनक ने एक बहुत बड़ा ज्ञानयज्ञ किया था । उसमें कुरु और पांचाल देश के अनेकों विद्वान ब्राह्मण एकत्रित हुए थे । राजा जनक बड़े विद्या-व्यासंगी एवं सत्संगी थे । उन्हें शास्त्र के गूढ़ तत्त्वों का विवेचन एवं परमार्थ-चर्चा ही अधिक प्रिय थी । इसलिए उनके मन में यह जानने की इच्छा हुई कि यहाँ आये हुए विद्वान ब्राह्मणों में सबसे बढ़कर तात्त्विक विवेचन करनेवाला कौन है ? इस परीक्षा के लिए उन्होंने अपनी गौशाला में एक हजार गौएँ बँधवा दीं । सब गौओं के सींगों पर दस-दस पाद (एक प्राचीन माप-कर्ष) सुवर्ण बँधा हुआ था । यह व्यवस्था करके राजा जनक ने उपस्थित ब्राह्मण-समुदाय से कहा :

''आप लोगों में से जो सबसे बढ़कर ब्रह्मवेत्ता हो, वह इन सभी गौओं को ले जाये ।''

राजा जनक की यह घोषणा सुनकर किसी भी ब्राह्मण में यह साहस नहीं हुआ कि उन गौओं को ले जाये । सब सोचने लगे कि 'यदि हम गौएँ ले जाने को आगे बढ़ते हैं तो ये सभी ब्राह्मण हमें अभिमानी समझेंगे और शास्त्रार्थ करने लगेंगे । उस समय हम इन सबको जीत सकेंगे या नहीं, क्या पता ?' यह विचार करते हुए सब चुपचाप ही बैठे रहे ।

सबको मौन देखकर याज्ञवल्क्यजी ने अपने ब्रह्मचारी सामश्रवा से कहा :

''हे सौम्य ! तू इन सब गौओं को हाँक ले चल ।''

ब्रह्मचारी ने आज्ञा पाकर वैसा ही किया ।

यह देखकर सब ब्राह्मण क्षुब्ध हो उठे । तब विदेहराज जनक के होता अश्वल याज्ञवल्क्यजी से पूछ बैठे : ''क्यों ? क्या तुम्हीं ब्रह्मनिष्ठ हो ? हम सबसे बढ़कर ब्रह्मवेत्ता हो ?''

यह सुनकर याज्ञवल्क्यजी ने नम्रतापूर्वक कहा :

''नहीं, ब्रह्मवेत्ताओं को तो हम नमस्कार करते हैं । हमें केवल गौओं की आवश्यकता है अतः गौओं को ले जाते हैं ।''

फिर क्या था ? शास्त्रार्थ आरंभ हो गया । यज्ञ का प्रत्येक सदस्य याज्ञवल्क्यजी से प्रश्न पूछने लगा । याज्ञवल्क्यजी इससे विचलित नहीं हुए । वे धैर्यपूर्वक सभी के प्रश्नों का क्रमशः उत्तर देने लगे । अश्वल ने चुन-चुनकर कितने ही प्रश्न किये, किन्तु उचित उत्तर मिल जाने के कारण वे चुप होकर बैठ गये । तब जरत्कारु गोत्र में उत्पन्न आर्तभाग ने प्रश्न किया । उनको भी अपने प्रश्न का यथार्थ उत्तर मिल गया, अतः वे भी मौन हो गये । फिर क्रमशः लाह्यायनि भुज्यु, चाक्रायण उषस्त एवं कौषीतकेय कहोल प्रश्न करके चूप होकर बैठ गये । इसके बाद वाचक्नवी गार्गी ने पूछा :

''भगवन् ! यह जो कुछ पार्थिव पदार्थ हैं, वे सब जल में ओत-प्रोत हैं । जल किसमें ओत-प्रोत है ?''

याज्ञवल्क्यजी : ''जल वायु में ओत-प्रोत है ।''

''वायु किसमें ओत-प्रोत है ?''

''अन्तरिक्षलोक में ।''

''अन्तरिक्षलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''गन्धर्वलोक में ।''

''गन्धर्वलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''आदित्यलोक में।''

''आदित्यलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''चन्द्रलोक में।''

''चन्द्रलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''नक्षत्रलोक में।''

''नक्षत्रलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''देवलोक में।''

''देवलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''इन्द्रलोक में।''

''इन्द्रलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''प्रजापतिलोक में।''

''प्रजापतिलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

''ब्रह्मलोक में।''

''ब्रह्मलोक किसमें ओत-प्रोत है ?''

इस पर याज्ञवल्क्यजी ने कहा : ''हे गार्गी ! यह तो अतिप्रश्न है। यह उत्तर की सीमा है। अब इसके आगे प्रश्न नहीं हो सकता। अब तू प्रश्न न कर, नहीं तो तेरा मस्तक गिर जायेगा।''

गार्गी विदुषी थीं। उन्होंने याज्ञवल्क्यजी के अभिप्राय को समझ लिया एवं मौन हो गईं। तदनन्तर आरुणि आदि विद्वानों ने प्रश्नोत्तर किये। इसके पश्चात् पुनः गार्गी ने समस्त ब्राह्मणों को संबोधित करते हुए कहा :

''यदि आपकी अनुमति प्राप्त हो जाये तो मैं याज्ञवल्क्यजी से दो प्रश्न पूछूँ। यदि वे प्रश्नों का उत्तर दे देंगे तो आप लोगों में से कोई भी उन्हें ब्रह्मचर्चा में नहीं जीत सकेगा।''

ब्राह्मणों ने कहा : ''पूछ लो, गार्गी !''

तब गार्गी बोली : ''याज्ञवल्क्यजी ! वीर के तीर के समान ये मेरे दो प्रश्न हैं। पहला प्रश्न है : द्युलोक के ऊपर, पृथ्वी का निम्न, दोनों का मध्य, स्वयं दोनों और भूत-भविष्य तथा वर्त्तमान किसमें ओत-प्रोत हैं ?''

याज्ञवल्क्यजी : ''आकाश में।''

गार्गी : ''अच्छा... अब दूसरा प्रश्न : यह आकाश किसमें ओत-प्रोत है ?''

याज्ञवल्क्यजी : ''इसी तत्त्व को ब्रह्मवेत्ता लोग अक्षर कहते हैं। गार्गी ! वह न स्थूल है न सूक्ष्म, न छोटा है न बड़ा। वह लाल, द्रव, छाया, तम, वायु, आकाश, संग, रस, गन्ध, नेत्र, कान, वाणी, मन, तेज, प्राण, मुख और माप से रहित है। उसमें बाहर-भीतर भी नहीं है। न वह किसीका भोक्ता है और न ही भोग्य।''

फिर आगे उसका विशद निरूपण करते हुए याज्ञवल्क्यजी बोले :

''इसको जाने बिना हजारों वर्षों के होम, यज्ञ, तप आदि के फल नाशवान् हो जाते हैं। यदि कोई इस अक्षर तत्त्व को जाने बिना ही मर जाये तो वह कृपण है और जान ले तो वह ब्रह्मवेत्ता है।

यह अक्षर ब्रह्म दृष्ट नहीं, दृष्टा है। श्रुत नहीं, श्रोता है। मत नहीं, मन्ता है। विज्ञात नहीं, विज्ञाता है। इससे भिन्न कोई दूसरा दृष्टा, श्रोता, मन्ता, विज्ञाता नहीं है। गार्गी ! इसी अक्षर में यह आकाश ओत-प्रोत है।''

गार्गी याज्ञवल्क्यजी का लोहा मान गयीं एवं उन्होंने निर्णय देते हुए कहा : ''इस सभा में याज्ञवल्क्य से बढ़कर ब्रह्मवेत्ता कोई नहीं है। इनको कोई पराजित नहीं कर सकता। हे ब्राह्मणों ! आप लोग इसीको बहुत समझें कि याज्ञवल्क्यजी को नमस्कार करनेमात्र से आपका छुटकारा हुए जा रहा है। इन्हें पराजित करने का स्वप्न देखना व्यर्थ है।''

राजा जनक की सभा ! ब्रह्मवादी ऋषियों का समूह ! ब्रह्मसंबंधी चर्चा ! याज्ञवल्क्यजी की परीक्षा और परीक्षक गार्गी ! यह हमारी आर्य नारी के ब्रह्मज्ञान की विजयवैजयन्ती नहीं तो और क्या है ?

विदुषी होने पर भी उनके मन में अपने पक्ष को अनुचित रूप से सिद्ध करने का दुराग्रह नहीं था। वे विद्वत्तापूर्ण उत्तर पाकर संतुष्ट हो गयीं एवं दूसरे की विद्वत्ता की उन्होंने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा भी की।

धन्य है भारत की आर्य नारी ! जो याज्ञवल्क्यजी जैसे महर्षि से भी शास्त्रार्थ करने में हिचकिचाती नहीं है। ऐसी नारी, नारी न होकर साक्षात् नारायणी ही हैं, जिनसे यह वसुन्धरा भी अपने-आपको गौरवान्वित मानती है।

('कल्याण' के 'नारी अंक' एवं बृहदारण्यक उपनिषद् पर आधारित)

*

तिलकजी की सत्यनिष्ठा

[१ अगस्त '९८ : तिलकजी की पुण्यतिथि पर विशेष]

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

बालगंगाधर तिलकजी के बाल्यकाल की यह घटना है :

एक बार वे घर पर अकेले ही बैठे थे कि अचानक उन्हें चौपड़ खेलने की इच्छा हुई। किन्तु अकेले चौपड़ कैसे खेलते ? अतः उन्होंने घर के खंभे को अपना साथी बनाया। वे दाँयें हाथ से खंभे के लिए एवं बाँयें हाथ से अपने लिए खेलने लगे। इस प्रकार खेलते खेलते वे दो बार हार गये।

दादीमाँ दूर से यह सब नजारा देख रही थीं। हँसते हुए वे बोलीं :

''धत् तेरे की... एक खंभे से हार गया ?''

तिलकजी : ''हार गया तो क्या हुआ ? मेरा दाँयाँ हाथ खंभे के हवाले था और मुझे दाँएँ हाथ से खेलने की आदत है। इसीलिए खंभा जीत गया, नहीं तो मैं ही जीतता।''

कैसा अद्भुत था तिलकजी का न्याय! जिस हाथ से अच्छे से खेल सकते थे उससे खंभे के पक्ष में खेले और हारने पर सहजता से हार भी स्वीकार कर ली। महापुरुषों का बाल्यकाल भी नैतिक गुणों से भरपूर ही हुआ करता है।

इसी प्रकार एक बार छःमासिक परीक्षा में तिलकजी ने प्रश्नपत्र के सभी प्रश्नों के सही जवाब लिख डाले।

जब परीक्षाफल घोषित हुआ तब विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए इनाम भी बाँटा जा रहा था। जब तिलकजी की कक्षा की बारी आयी तब पहले नंबर के लिए तिलकजी का नाम घोषित किया गया। ज्यों-ही अध्यापक तिलकजी को बुलाकर इनाम देने लगे, त्यों ही बालक तिलकजी रोने लगे।

यह देखकर सभी को बड़ा आश्चर्य हुआ ! जब अध्यापक ने गंगाधर से रोने का कारण पूछा तो वे बोले :

''अध्यापकजी ! सच बात तो यह है कि सभी प्रश्नों के जवाब मैंने नहीं लिखे हैं। आप सारे प्रश्नों के सही जवाब लिखने के लिए मुझे इनाम दे रहे हैं, किन्तु एक प्रश्न का जवाब मैंने अपने मित्र से पूछकर लिखा था। अतः इनाम का वास्तविक हकदार मैं नहीं हूँ।''

अध्यापक प्रसन्न होकर तिलकजी को गले लगाकर बोले :

''बेटा ! भले तुम्हारा पहले नंबर के लिए इनाम पाने का हक नहीं बनता, किन्तु यह इनाम अब तुम्हें तुम्हारी सच्चाई के लिए देता हूँ।''

ऐसे सत्यनिष्ठ, न्यायप्रिय एवं ईमानदार बालक ही आगे चलकर महान् कार्य कर पाते हैं।

प्यारे विद्यार्थियों ! तुम ही भावी भारत के भाग्य-विधाता हो। अतः अभी से अपने जीवन में सत्यपालन, ईमानदारी, संयम, सदाचार, न्यायप्रियता आदि गुणों को अपनाकर अपना जीवन महान् बनाओ। तुम्हीं में से कोई लोकमान्य तिलक तो कोई सरदार वल्लभभाई पटेल, कोई शिवाजी तो कोई महाराणा प्रताप जैसा बन सकता है। तुम्हीं में से कोई ध्रुव-प्रहलाद, मीरा-मदालसा का आदर्श पुनः स्थापित कर सकता है।

उठो, जागो एवं अपने इतिहास-प्रसिद्ध महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को भी दिव्य बनाने के मार्ग पर अग्रसर हो जाओ... भगवत्कृपा और संत-महापुरुषों के आशीर्वाद तुम्हारे साथ हैं।

*

गौमाता : रोग-दोषनिवारिणी

[गतांक का शेष]

(७) मंद जठराग्नि : आमाशय के विकारों के कारण पाचन संबंधी रस (एन्जाईम) कम उत्पन्न होता है। इससे भूख कम लगती है। सारा दिन अरुचि, जी मिचलाना, अपच, विषम ज्वर, कब्ज या अतिसार के रोग उत्पन्न होते हैं। ऐसे रोगियों का वात और पित्त कुपित हो जाता है। अतः दिनों-दिन वे कमजोर होते-होते जल्दी ही वृद्ध हो जाते हैं।

सर्दियों के दिनों में हररोज तक्र एवं गर्मियों के दिनों में छाछ का सेवन करने से ये रोग सदा के लिए नष्ट हो जाते हैं।

(८) ग्रहणी : ग्रहणी या संग्रहणी एक भयंकर रोग है। इस रोग में रोगी की पाचनशक्ति कमजोर हो जाती है। हमेशा अतिसार की तकलीफ रहती है। कभी मलाशय में पीड़ा के कारण मलाशयभ्रंश भी हो जाता है। कुशल वैद्यों का मानना है कि तक्र के प्रयोग से संग्रहणी रोग दूर हो जाता है।

(९) अजीर्ण या अपच : यह सामान्य तथा सभी को होनेवाला रोग है। गाय के तक्र में चुटकी भर जीरा, १० ग्राम कालीमिर्च, १०-१२ ग्राम लाहौरी नमक डालकर उसे एक-एक घूँट करके तथा चूस-चूसकर पियें। मट्ठा सिर्फ दिन में ही पीना चाहिए। दोपहर के बाद मट्ठा का प्रयोग वर्जित है।

(१०) आँखों की जलन : धूल, धुआँ तथा गर्मी से आँखें लाल हो जाती हैं। दही की मलाई या मक्खन पलकों पर लगाकर सो जायें। पलकों पर इसके लेप से जलन समाप्त हो जाती है। मट्ठा पीनेवाले की आँखें सदैव नीरोग रहती हैं।

(११) आँतों के कीड़े : आज कल यह बड़ी सामान्य बीमारी है। कृमि को नष्ट करने के लिए एक दिन पहले मट्ठा पियें। इससे आँतों के सभी कीड़े एक जगह इकट्ठे हो जाएँगे। फिर नमकीन मट्ठे का सेवन करने से उनका सफाया हो जाएगा। इससे सरल, सुलभ, स्वादिष्ट तथा गुणकारी अन्य कोई औषधि नहीं है।

(१२) उपदंश या आतशक : मीठे दही का मट्ठा और रीठे के छिलकों के चूर्ण का सेवन करने से यह रोग एक सप्ताह में दूर हो जाएगा। रीठे के छिलके सुखाकर, पीसकर, पानी मिलाकर चने के बराबर गोली बना लें। प्रतिदिन एक गोली १-२ गिलास मट्ठे के साथ लें।

(१३) एग्जीमा या छाजन : नीम की पत्ती (कोंपलें) छाछ में पीसकर एग्जीमाग्रस्त भाग पर दिन में २-३ बार लेप करें। ताजा दही या मट्ठा पियें। उसमें नमक या शक्कर न मिलायें।

(१४) कब्ज : मट्ठा पीनेवाले को कब्ज हो ही नहीं सकती। अन्य किसीको कब्ज होने पर दो चुटकी अजवायन पीसकर मट्ठे में मिलाकर पीने से आराम मिलता है। यदि बासी मट्ठे में नमक मिलाकर सेवन करें तो भी कब्ज में लाभ होता है।

(१५) चेहरे की झाँइयाँ : कांतिपूर्ण चेहरे की ललक किसे नहीं होती ? इसके लिए बाजार में तरह-तरह के लोशन, साबुन तथा तेलों की भरमार है। इनकी कीमत भी सामान्य आदमी की औकात से बाहर है। कभी-कभी लोशन या साबुन अनुकूल नहीं रहता या एलर्जी करता है। इसके लिए अलग से चिकित्सा करानी पड़ती है।

झाँइयोंवाले चेहरे पर गाय का एक दिन का बासी

मट्ठा सुबह स्नान से पूर्व लगाकर हल्की मालिश करें तथा दस मिनट बाद स्नान कर लें। कुछ ही दिनों में चेहरे की झाँइयाँ मिट जाएँगी और चेहरा कांतिपूर्ण हो जाएगा।

(१६) दाद : नीम की पाँच पत्तियाँ, ढाई ग्राम हल्दी, पाँच दाने कालीमिर्च, एक छोटी पीपल छाछ में पीसकर दाद पर लेप करें। कुछ ही दिनों में दाद गायब हो जाएगा।

(१७) तक्रारिष्ट : अजवायन, आँवला, कालीमिर्च प्रत्येक १२-१२ तोला, पाँचों नमक ४-४ तोला। सभी का चूर्ण बनाकर मिट्टी के एक घड़े में डालकर उसमें मट्ठा ६ सेर, ६ छटांक, २ तोला डालें। पात्र का मुँह बंद करके एक माह तक रख दें। बाद में छानकर शीशियों में भर लें। इसकी डेढ़ से ढाई तोला खुराक पानी में मिलाकर प्रतिदिन सुबह-शाम प्रयोग करें। पाचनशक्ति कमजोर होने पर, अजीर्ण, सूजन, गुल्म अर्श (बवासीर), कृमि, प्रमेह, अतिसार तथा उदररोगों में यह खूब लाभकारी है।

पथ्य : जिस मट्ठे से पूरा घी निकाल लिया गया हो ऐसा मट्ठा ही तक्र कहलाता है। यह अत्यंत हल्का, सुपाच्य, गुणकारी होने से सबके लिए पथ्य यानी सेवन करने योग्य है। जिसमें से थोड़ा घी निकाला गया हो, ऐसा मट्ठा जरा भारी, पुष्टिकारक तथा कफकारक होता है। जिसमें से बिल्कुल घी न निकाला गया हो ऐसा मट्ठा गाढ़ा, भारी, पौष्टिक तथा कफ बढ़ानेवाला होता है। किन्तु ऐसा मट्ठा अत्यंत बलवान शरीरवाले, प्रबल पाचनशक्तिवाले तथा व्यायाम या अधिक परिश्रम करनेवाले ही हजम कर सकते हैं।

अपथ्य : रात्रि में दही, मट्ठा नहीं खाना चाहिए। बिना घी, चीनी, मूंग की दाल, शहद और आँवला मिलाये दही न खायें। कुछ न मिले तो पानी मिलाकर ही दही खायें। दही गर्म करके न खायें।

(४) गोमूत्र

शकृन्मूत्रं परं तासामलक्ष्मीनाशनम् परम्।

(अग्निपुराण)

भगवान धन्वंतरि आचार्य सुश्रुत से कहते हैं : 'गौओं का गोबर और मूत्र अलक्ष्मी (दरिद्रता) के नाश का सर्वोत्तम साधन है।'

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्।
एक रात्रोपवासश्च श्वपाकमधिशोधयेत्॥

'एक दिन गोमूत्र, गोमल, गोघृत, गोदुग्ध, गोदधि और कुशोदक का सेवन तथा एक दिन का उपवास चाण्डाल को भी शुद्ध कर देता है।'

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार :

गोमूत्रे च तथा गंगा दधिक्षीरघृतेषु च।
सदा व्यवस्थितं सोमं रोचनायां सरस्वती॥

'गोमूत्र में साक्षात् गंगा तथा गोदधि, गोदुग्ध, गोघृत में सोम और गोरोचना में सरस्वती देवी का निवास होता है।'

गोमूत्र के औषधीय गुणों की तो भरमार है परंतु इतना सुलभ व सस्ता होने के कारण हम उसे औषधि मानने को तैयार ही नहीं हैं। पेट के रोगों के लिए तो गोमूत्र रामबाण है।

गोमूत्र का सेवन करते समय ध्यान रखना चाहिए कि गाय देशी ही हो, गाय प्रतिदिन जंगल में चरने जाती हो, गाय बिना ब्याई हो, गर्भवती तथा रोगी न हो। यदि एक वर्ष से कम उम्र की बछिया हो तो सबसे अच्छा है।

देशी गाय से अभिप्राय भारतीय नस्ल की गायों से है। जो गुण देशी गाय के गोबर एवं मूत्र में होते हैं, वे विदेशी तथा संकर नस्ल की गाय के गोबर एवं मूत्र में नहीं होते। इसके पीछे यह तथ्य हो सकता है कि विदेशी व संकर गायें बहुत अधिक दूध देनेवाली होती हैं। उन्हें दाना अधिक दिया जाता है। अधिक दाना खाने के कारण उनके गोबर में ऐसे औषधीय गुण नहीं होते जैसे कि देशी गाय में होते हैं।

जंगल में चरनेवाली गाय अनेक तरह की घास तथा जड़ी-बूटियाँ खाती है। इससे उसके गोबर-मूत्र में औषधीय गुण अधिक आते हैं। गर्भवती गाय के मूत्र में अनेक तरह के हार्मोन का स्राव होता है जो अधिक गुणकारी नहीं होता। रोगी गायों के मूत्र में रोगाणुओं की संख्या तथा अपचय पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है जिससे ये मूत्र अधिक गुणकारी नहीं रह पाता। इसलिए बिना ब्याई बछड़ी का मूत्र सर्वोत्तम माना जाता है। (क्रमशः)

कुम्हड़ा

समस्त सब्जियों में सबसे अधिक वजनदार सब्जी है कुम्हड़ा। कुम्हड़ा प्राकृतिक रूप से मीठा होता है अतः उसकी सब्जी में ऊपर से मिठास डालने की जरूरत नहीं पड़ती। एक बार कुम्हड़ा काट लेने के बाद वर्षा ऋतु में उस पर फफूँदी लग जाती है। अतः इस मौसम में ताजा कुम्हड़ा ही प्रयोग में लें। ठीक प्रकार से पका हुआ व पुराना कुम्हड़ा खाने में गुणप्रद माना जाता है।

गुणधर्म : पीला या लाल कुम्हड़ा आयुर्वेद विज्ञान के अनुसार गुण में शीतल, रुचिकर स्वाद में मधुर, बलवर्धक, पौष्टिक और वीर्यवर्धक है। वह पचने में भारी, पित्त व दोषनाशक, कफकारक, वायुकारक श्रम-शक्तिवर्धक एवं उत्तम पित्तशामक (गर्मीशामक) है। कुम्हड़ा प्रमेह, मूत्राल्पता, मूत्र धीरे-धीरे उतरने की समस्या, तृषा, रक्तविकार, श्रम, उन्माद, भ्रांति, मानसिक रोग (पागलपन), हृदयरोग, रक्तपित्त (रक्तस्राव) और फेफड़े के रोग मिटाता है। ये गुण परिपक्व कुम्हड़े में होते हैं।

बड़ा कुम्हड़ा क्षार (नमक) के साथ लिया जाए (सब्जी बनायी जाए) तो जठराग्नि बढ़ाता है, पचने में हल्का, मूत्राशय को स्वच्छ करनेवाला और मन के रोग मिटाता है। पित्त (गर्म) प्रकृतिवालों के लिए कुम्हड़ा सबसे अधिक लाभदायक है।

कुम्हड़े के बीज विषनाशक एवं पेट के कृमि के नाशक होते हैं। उसके बीज (मींज) की मग्जतरी बादाम जैसी शक्तिदायक है। इस बीज में से तेल निकलता है, जो स्नायुमंडल की पुष्टि करता है, दिमाग की रुक्षता दूर करता है, दिमाग को तर करके निद्रा लाता है और शरीर पर मालिश करने से शरीर में स्फूर्ति लाता है। कुम्हड़े के रस में जीव-जन्तु के विष की तथा अन्य विष की असर दूर करने का प्रबल गुण है। उसके रस के सेवन से अम्लपित्त (एसिडिटी) मिटता है एवं उसका रस मूत्रल व मूत्रपिंड के लिए सौम्य उत्तेजक है। यह रस शरीर की सूजन, पथरी व मधुप्रमेह में भी लाभ करता है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार कुम्हड़ा विटामिन 'ए' से समृद्ध है। विटामिन 'ए' की समृद्धि के विषय में गाजर के बाद दूसरे नम्बर पर कुम्हड़ा आता है। कमजोर आँखोंवाले या कमजोर दृष्टिवाले, चश्माधारियों के लिए कुम्हड़े की सब्जी खाना अति श्रेष्ठ माना जाता है। आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से कुम्हड़ा शीतल व मूत्र पैदा करनेवाला है। उससे रक्तनलिकाओं का संकुचन होता है और यदि वह अधिक मात्रा में लिया जाए तो दस्त साफ लाता है। उसके अलावा शांत और गहरी निद्रा भी लाता है। पागलपन के रोग में जब रोगी की आँखें लाल-चटक हो गई हों, नाड़ी की गति अत्यधिक तेज हो गई हो तथा रोगी अत्यंत उत्तेजित, क्रोधी या आवेशमय हो गया हो तब उसे कुम्हड़े का रस १०० से २०० मि.ली. पिलाने से वह शांत हो जाता है और उसे नींद आ जाती है। फेफड़े या शरीर के किसी भी मार्ग से रक्तस्राव होता हो तब कुम्हड़े का रस सचमुच में बहुत लाभ करता है। टी.बी. (क्षय) की प्रथम अवस्था में ताजे कुम्हड़े का रस नियमित पिलाने से लाभ होता है।

* औषधप्रयोग *

(१) जल जाने पर : जल जाने पर हुई सूजन, जलन व जख्म पर कुम्हड़े का गर्भ पुटिट्स की भाँति लगाने से लाभ होता है।

(२) अंदरूनी जलन : कुम्हड़े का रस निकालकर उसमें मिश्री मिलाकर पीने से अंदरूनी जलन शांत होती है।

(३) दिमागी गर्मी – पागलपन : कुम्हड़े के छोटे-छोटे टुकड़े करके उसे बाष्प से उबालकर उसके ऊपर मिश्री मिला दो। फिर उसके ऊपर इमली का

सिरका डालकर मिला दो। उसके बाद कपड़छन करके रोगी को देने से दिमागी गर्मी, सिरदर्द व उन्माद में लाभ होता है।

(४) पेट के कृमि : पेट में यदि कृमि हो गये हों तो कुम्हड़े के १० से २० ग्राम बीज मिश्री या गुड़ मिलाकर रात को सोते समय खा जायें। सुबह अरण्डी का तेल पीने से कृमि बाहर निकल जाएँगे।

(५) सुजाक (मूत्ररोग) : कुम्हड़े के डेढ़ से दो ग्राम बीज का चूर्ण बनाकर उसमें मिश्री या शहद मिलाकर सुबह-शाम दें।

(६) रक्तस्राव (रक्तपित्त) : शरीर के किसी भी मार्ग से रक्तस्राव होता हो तब कुम्हड़े के रस में मिश्री मिलाकर या उसके रस का शरबत बनाकर पीने से लाभ होता है।

(७) विषैले जन्तुओं का डंक : कानखजूरा, मकोड़ा, मधुमक्खी, बिच्छू जैसे विषैले जन्तुओं के काट जाने पर कुम्हड़े का ऊपर का मुँहवाला हिस्सा काटकर उसे पानी के साथ घिस लें। डंक पर उसका लेप करने से लाभ होता है।

(८) श्वास (दमा) : कुम्हड़े के मूल का चूर्ण ३ भाग, सौंठचूर्ण १ भाग मिलाकर उसमें से ५ ग्राम चूर्ण पानी के साथ या शहद के साथ लेने से दमा में लाभ होता है।

(९) कमजोरी : कुम्हड़े के बीज के अन्दर का चूर्ण घी में सेंक लें। उसमें पीसी हुई मिश्री मिलाकर लड्डू या पाक बनाकर रोज खाने से अधिक मेहनत या श्रम से आयी हुई कमजोरी दूर होती है।

(१०) अम्लपित्त (एसिडिटी) : कुम्हड़े के ५० से १०० मि.ली. रस में एक चम्मच मिश्री डालकर सुबह-शाम पियें। खट्टा, मीठा, तीखा व तला हुआ नहीं खाने से अम्लपित्त मिटता है।

(११) पथरी : कुम्हड़े के ३० से ५० मि.ली. रस में थोड़ी-सी हींग और जवाखार मिलाकर पीने से पथरी नष्ट हो जाती है।

विशेष : आयुर्वेद में नीले कुम्हड़े (पेठा) में से खंड कुष्मांड अवलेह, पाक व अर्क कुष्मांड बनते हैं। खंड कुष्मांड अवलेह क्षय, रक्तपित्त (रक्तस्राव), हृदयरोग, मिरगी-फेफड़ा, पागलपन इत्यादि मानसिक रोगों में वैद्य प्रयोग करते हैं।

इस प्रकार कुम्हड़ा एक उत्तम सब्जी व उत्तम औषधि है।

सावधानी : वायु एवं कफ प्रकृतिवालों के लिए अधिक मात्रा में कुम्हड़े का सेवन अच्छा नहीं माना जाता। एकदम कच्चा, अपक्व या कोमल (हरा) कुम्हड़ा विष समान होता है, अतः उसका सेवन न करें।

*

रोगों से बचाव

१. सिर के रोग : नहाने से पहले हमेशा पाँच मिनट तक मस्तक के मध्य तालुवे पर किसी श्रेष्ठ तेल (नारियल, सरसों, तिल्ली, ब्राह्मी, आँवला, भृंगराज) की मालिश करो। इससे स्मरणशक्ति और बुद्धि का विकास होगा। बाल काले, चमकीले और मुलायम होंगे।

विशेष : रात को सोने से पहले कान के पीछे की नाड़ियाँ, गर्दन के पीछे की नाड़ियाँ और सिर के पिछले भाग पर नर्मी से तेल की मालिश करने से चिंता, तनाव और मानसिक परेशानी के कारण सिर के पिछले भाग और गर्दन में उत्पन्न होनेवाला दर्द तथा भारीपन मिटता है।

२. नेत्रविकार : सुबह दाँत साफ करके, मुँह में पानी भरकर मुँह फुला लें। इसके बाद आँखों पर ठंडे जल के छींटे मारो। प्रतिदिन इस प्रकार दिन में तीन बार सुबह-दोपहर-शाम ठंडे जल से छींटे या छप्पकें मारने से नेत्रों में ताजगी का अनुभव होता है और किसी प्रकार का नेत्रविकार नहीं होता। कुछ मास के प्रयोग से नेत्रों के चश्मा उतर सकते हैं। एक मास में ही लाभ प्रतीत होने लगेगा।

विशेष : (अ) ध्यान रहे कि मुँह का पानी गर्म न होने पाए। गर्म होने पर पानी बदल लें।

(ब) मुँह में से पानी निकालते समय भी पूरे जोर से मुँह फुलाते हुए वेग से पानी को छोड़ो। इससे ज्यादा लाभ होता है। आँखों के आसपास झुर्रियाँ नहीं पड़तीं।

(क) पानी अत्यधिक शीतल भी न हो।

(ड) प्रातः मुँह में जल अच्छी तरह भरकर त्रिफला जल से आँखों पर छींटे देने से नेत्रज्योति मंद नहीं होती। त्रिफला जल बनाने के लिए २ ग्राम त्रिफला चूर्ण १०० ग्राम जल में संध्या के समय किसी मिट्टी या काँच के पात्र में भिगो दें। प्रातः उस जल को ऊपर से निथारकर बारीक स्वच्छ कपड़े से छान लें। फिर उस जल से नेत्रों को नित्य धोयें। इससे नेत्रों के सब विकार नष्ट होकर आँखों की ज्योति बढ़ती है।

विकल्प : प्रतिदिन प्रातःकाल जलनेति करो।

सहायक उपचार : नित्य प्रातः सरसों के तेल से पाँव के तलुवों और अंगुलियों की मालिश करने से आँखों की ज्योति बढ़ती है। सबसे पहले तेल से तर करके पाँव के अंगुठों की मालिश करनी चाहिए। इससे किसी प्रकार का नेत्ररोग नहीं होता और आँखों की रोशनी तेज होती है। तदुपरांत, पैर का खुर्दशपन, रूखापन तथा पैर की सूजन शीघ्र दूर होती है। पैर में कोमलता तथा बल आता है।

रविवार के दिन मालिश करने से ताप पैदा होता है। मंगलवार के दिन भी मालिश न करें।

३. कान के रोग : सप्ताह में एक बार भोजन से पूर्व कान में सरसों के हल्के सुहाते गर्म तेल की दो-चार बूँदें डालकर खाना खायें। इससे कानों में कभी तकलीफ नहीं होगी। कान में तेल डालने से अन्दर का मैल उगलकर बाहर आ जाता है। सप्ताह या पन्द्रह दिन में एक बार ऐसा करने से बहरेपन का भय नहीं रहता। दाँत भी मजबूत बनते हैं।

विशेष : (अ) २५ ग्राम सरसों के तेल में लहसुन की दो कलियाँ छीलकर डाल दें। फिर गुनगुना गर्म करके छान लें। सप्ताह में यदि एक बार कान में यह तेल डाल लिया जाए तो श्रवणशक्ति तेज बनती है। कान नीरोग बने रहते हैं। इस लहसुन के तेल को थोड़ा गर्म करके कान में डालने से खुश्की भी दूर होती है। छोटा-मोटा घाव भी सूख जाता है।

(ब) कान और नाक के छिद्रों में उँगली या तिनका डालने से उनमें घाव होने या संक्रमण पहुँचने का भय रहता है। अतः ऐसा न करें।

४. नजला-जुकाम : रात के समय नित्य सरसों का तेल या गाय के घी को गुनगुना करके नाक द्वारा एक-दो बूँदें सूँघते रहने से नजला-जुकाम कभी नहीं होता। मस्तिष्क अच्छा रहता है।

५. दाँत, जीभ व मुँह के रोग : प्रातः कड़वे नीम की दो-चार हरी पत्तियाँ चबाकर उसे थूक देने से दाँत, जीभ व मुँह एकदम साफ और नीरोग रहते हैं। कड़वे नीम की पत्तियों में क्लोरोफिल होता है।

विशेष : नीम की दातुन उचित ढंग से करनेवाले के दाँत मजबूत रहते हैं। दाँतों में न तो कीड़े ही लगते हैं और न दर्द होता है। मुँह के रोगों से बचाव होता है। जो बारह साल नीम की दातुन करता है उसके मुँह से चंदन की खुश्बू आती है।

६. मुख के रोग : मुख में कुछ देर सरसों का तेल रखकर कुल्ला करने से जबड़ा बलिष्ट होता है। आवाज ऊँची और गम्भीर हो जाती है। चेहरा पुष्ट हो जाता है और छः रसों में से हर एक रस का अनुभव करने की शक्ति बढ़ जाती है। इस क्रिया से कंठ नहीं सूखता और न ही होंठ फटते हैं। दाँत भी नहीं टूटते क्योंकि दाँतों की जड़ें मजबूत हो जाती हैं। दाँतों में पीड़ा नहीं होती।

७. सर्दी के कारण उत्पन्न रोग तथा गले व श्वसन संस्थान के रोग : जो व्यक्ति नित्य प्रातः खाली पेट तुलसी की चार-पाँच पत्तियों को चबाकर पानी पी लेता है, वह अनेक रोगों से सुरक्षित रहता है। सामान्य रोग स्वतः ही दूर हो जाते हैं। सर्दी के कारण होनेवाली बीमारियों में विशेष रूप से जुकाम, खांसी, ब्रोंकाइटिस, निमोनिया, इन्फ्लूएंजा, गले, श्वासनली और फेफड़ों के रोगों में तुलसी का सेवन उपयोगी है।

८. श्वासरोग : श्वास बदलने की विधि से, दाहिने स्वर के अधिकतम अभ्यास से तथा दाहिने स्वर में ही प्राणायाम के अभ्यास से श्वासरोग नियंत्रित किया जा सकता है।

भस्त्रिका प्राणायाम करने से दमा, क्षय आदि रोग नहीं होते। पुराने से पुराना नजला-जुकाम भी समाप्त हो जाता है। इस प्राणायाम से नाक व छाती के रोग नहीं होते।

९. हृदय तथा मस्तिष्क की बीमारियाँ : दक्षिण

की ओर पैर करके सोने से हृदय तथा मस्तिष्क की बीमारियाँ पैदा होती हैं । अतः दक्षिण की तरफ पैर करके न सोयें ।

विशेष : नित्य प्रातः चार-पाँच किलोमीटर तक चहलकदमी (Brisk Walk) करनेवाले व्यक्तियों को दिल की बीमारी नहीं होती ।

१०. पेट का कैंसर : (अ) नित्य भोजन के आधा-एक घंटे के बाद एक-दो कली लहसुन की कच्ची ही छिलकर चबाया करें । ऐसा करने से पेट में कैंसर नहीं होता । कैंसर हो भी गया तो लहसुन की एक-दो कली पीसकर पानी में घोलकर नित्य खाना खाने के बाद आवश्यकतानुसार लगातार एक-दो मास तक पीने से पेट का कैंसर ठीक हो जाता है ।

(ब) तनावमुक्त रहो और कैंसर से बचो । नवीन खोजों के अनुसार कैंसर का प्रमुख कारण मानसिक तनाव है । शरीर के किस भाग में कैंसर होगा यह मानसिक तनाव के स्वरूप पर निर्भर है ।

(क) यदि कैंसर से पीड़ित व्यक्ति अनारदाना का सेवन करता रहे तो उसकी आयु १० वर्ष तक बढ़ सकती है । कैंसर के रोगी को रोटी आदि न खाकर चावल का ही सेवन करना चाहिए ।

११. पेट की बीमारियाँ : (अ) तुलसी की चार पत्तियाँ रोजाना चबाकर खाने से या पीसकर गोली बनाकर पानी के घूँट के साथ निगलने से पेट की बीमारियाँ नहीं होतीं ।

(ब) खाना खूब चबा-चबाकर खाओ । एक ग्रास को बत्तीस बार चबाना चाहिए । भूख से कुछ कम एवं नियत समय पर खाना चाहिए । इससे अपच, आफरा आदि उदररोगों से व्यक्ति बचा रहता है । साथ ही पाचनक्रिया भी ठीक रहती है ।

१२. पित्त-विकार, बवासीर और पेट के कीड़े : सप्ताह में एक बार करेले की सब्जी खाने से सब तरह के बुखार, पित्त-विकार, बच्चों के हरे-पीले दस्त, बवासीर, पेट के कीड़े एवं मूत्र रोगों से बचाव होता है ।

१३. गुर्दे की बीमारी : भोजन करने के बाद फौरन मूत्रत्याग करने से गुर्दा, कमर और जिगर के रोग नहीं होते । गठिया आदि अनेक बीमारियों से बचाव होता है ।

१४. वात रोग : जो प्रतिदिन मालिश करते हैं उनको वायु के रोग नहीं होते । उनका शरीर थकान और चोट सहन करने में समर्थ हो जाता है । महीने में कम-से-कम चार बार तेल मालिश करनी ही चाहिए ।

१५. फोड़े-फुन्सियाँ और चर्म रोग : चैत्र मास अर्थात् मार्च-अप्रैल में जब नीम की नयी-नयी कोंपलें खिलती हैं तब इक्कीस दिन तक प्रतिदिन दातुन-कुल्ला करने के बाद ताजी पन्द्रह कोंपलें (बच्चों के लिए सात) चबाकर खाने या गोली बनाकर पानी के साथ निगलने या घोंटकर पीने से सालभर फोड़े-फुन्सियाँ नहीं निकलतीं ।

विशेष : खाली पेट इसका सेवन करके कम-से-कम दो घण्टों तक कुछ न खायें ।

(अ) इससे खून की बहुत सारी खराबियाँ, खुजली आदि चर्मरोग, पित्त और कफ के रोग जड़ से नष्ट होते हैं ।

(ब) इससे मधुमेह (डायबिटीज) की बीमारी से बचाव होता है ।

(क) इससे मलेरिया और विषम ज्वर की उत्पत्ति की सम्भावना भी कम रहती है ।

सावधानियाँ : ध्यान रहे कि नीम की इक्कीस कोंपलें और सात पत्तियों से ज्यादा एवं लगातार बहुत लम्बे समय तक नहीं खायें वरना यौवन-शक्ति कमजोर होती है व वात-विकार बढ़ते हैं । तेल, मिर्च, खटाई एवं तली हुई चीजों का परहेज करें ।

१६. मलेरिया : मलेरिया के मौसम में रोजाना प्रातः तुलसी की चार पत्तियाँ तथा चार कालीमिर्च पीसकर गोली बनाकर पानी के साथ निगलने या वैसे ही चबा लेने से मलेरिया से बचा जा सकता है । मलेरिया के लिए यह कुनैन (Quinine) का काम करती है । इससे बुखार का भय भी नहीं रहता ।

१७. हैजा : एक नींबू एक गिलास पानी में निचोड़कर उसमें एक चम्मच मिश्री मिलाकर शिकंजी बनाकर प्रातः पीने से हैजे में अत्यंत लाभ होता है । हैजे के लिए यह अत्युत्तम प्रयोग है । यहाँ तक कि प्रारम्भिक अवस्था में इसके एक-दो बार के सेवन से ही रोग शांत हो जाता है ।

विशेष : (अ) कपूर को साथ रखने से हैजे का

असर नहीं होता।

(ब) नींबू की शिकंजी पीने से पित्त, वमन, तृषा और दाह में फायदा होता है।

(क) जो व्यक्ति दूध नहीं पचा सकते उन्हें अपनी पाचनशक्ति ठीक करने के लिए कुछ दिन नींबू की शिकंजी पीना चाहिए।

(ड) भोजन के साथ नींबू के रस का सेवन करने से खतरनाक और संक्रामक बीमारियों से बचाव होता है।

१८. टाइफाइड जैसे संक्रामक रोग : दालचीनी का चूर्ण एक चुटकी यानी आधा या एक ग्राम दो चम्मच शहद में मिलाकर दिन में दो बार चाटने से मोतीझरा (टाइफाइड) जैसे संक्रामक रोग से बचा जा सकता है।

१९. चेचक : नीम की सात कोंपलों और सात कालीमिर्च इन दोनों का एक मास लगातार प्रातः खाली पेट सेवन किया जाय तो चेचक जैसा भयंकर रोग एक साल तक नहीं होगा। पन्द्रह दिन प्रयोग करने से छः मास तक चेचक नहीं निकलती। चेचक के दिनों में जो लोग किसी भी प्रकार नीम के पत्तों का सेवन करते हैं, उन्हें चेचक जैसे भयंकर रोग से पीड़ित नहीं होना पड़ता है।

२०. लू : ग्रीष्मकाल में एक प्याज को (ऊपर का मरा छिलका हटाकर) अपनी जेब में रखने मात्र से लू नहीं लगती।

घर से बाहर जाने से पहले खूब पानी या छाछ पीकर निकलने से लू नहीं लगती।

२१. दूषित जल : दूषित जल में तुलसी की हरी पत्तियाँ (चार लीटर जल में ५०-६० पत्तियाँ) डालने से जल शुद्ध और पवित्र हो जाता है। इसके लिए जल को कपड़े से छानते समय तुलसी की पत्तियाँ कपड़े में रखकर जल छान लेना चाहिए।

विशेष : तुलसी की पत्तियों में खाद्य वस्तुओं को विकृत होने से बचाने का अद्भुत गुण है। सूर्यग्रहण आदि के समय जब खाने का निषेध रहता है तब खाद्य वस्तुओं में तुलसी की पत्तियाँ डालकर यह मान लिया जाता है कि वस्तुएँ विकृत नहीं हुई हैं।

*

अपहृत बालक मिला

परम पूज्य सद्गुरुदेव की कृपा से कई छोटे-मोटे चमत्कारिक अनुभव होते ही रहते हैं।

एक बार मेरा दस वर्षीय पुत्र ऋषि स्कूल गया हुआ था। वहीं रास्ते में एक लड़का उसे बहला-फुसलाकर तथा मार-पीटकर मालगाड़ी के डिब्बे में बैठाकर सीतापुर से नीमसार ले गया। वहाँ से दूसरी ट्रेन में बैठाकर बालामऊ ले गया। वहाँ फिर उसे मारा और बोला : ''किसीको भी अपना सही पता एवं फोन नंबर मत बताना, नहीं तो तुम्हें बहुत मारेंगे। सुबह ४ बजे मामी के गाँव चलेंगे। वहाँ से तुम्हारे पापा को चिट्ठी डलवा देंगे कि इतने लाख रूपये उस जगह पर रख जाओ और अपने बेटे को ले जाओ।'' इतना सब कहकर वह स्टेशन पर ही एक बैंच पर सो गया और दूसरी बैंच पर ऋषि डरा-सहमा लेटा रहा।

इधर घर पर हम सभी लोग ढूँढ़-ढूँढ़कर खूब परेशान हो रहे थे। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट वगैरह को खबर की जा चुकी थी। सभी जगह वायरलैस करा दिया गया था। लखनऊ आदि की सभी ट्रेनें और बसें देखी जा रही थीं। ऋषि का कुछ अता पता नहीं चल रहा था। अंत में जब प्रार्थना-आरती करके गुरुमंत्र का जप किया तो आश्चर्यजनक घटना घटी।

बालामऊ में पूज्य बापू ऋषि के पास आये। प्यार से उसका हालचाल तथा पता वगैरह पूछकर हमारे यहाँ फोन से खबर करवा दी। वह एरिया डकैत लोगों का था अतः रात को १२ बजे सभी ने वहाँ जाने से मना कर दिया। तब हरदोईवाले नरेश अग्रवाल ने अपने

किसी खास आदमी को, जो बालामऊ में रहता था, फोन कर दिया और वह आदमी बापूजी के पास से ऋषि को अपने घर ले गया।

फोन आदि करने में २ घंटे लग गये। तब तक पूज्य बापू ऋषि को अपने पास ही चिपकाये हुए बैठे रहे। दूसरे दिन हम ऋषि को घर ले आये। पूज्य बापू की कृपा से ही हम ऋषि को प्राप्त कर सके।

ऐसे अगम-निगम के औलिया पूज्य बापू के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम!

- सावित्री अग्रवाल
तामसेनगंज, सीतापुर (उ. प्र.).

*

पूज्य बापू को देखते ही यमदूत भाग गये

सम्पादक महोदय!

हरि ॐ...

पिछले वर्ष दिनांक : २८-११-'९७ को मुझे हार्ट-अटैक हुआ था। उस समय मुझे जो अनुभव हुआ उसे मैं अपने शब्दों में लिख रहा हूँ :

मैं रेलवे सुरक्षा बल में उपनिरीक्षक के पद पर उज्जैन (म. प्र.) में कार्यरत हूँ। मैं २८ नवम्बर के दिन प्रातः आठ बजे तीन कांस्टेबल लेकर एक फरार मुजरिम को पकड़ने जावरा गया। वहाँ जाते ही हमें मुजरिम मिल गया। उसको पकड़कर थोड़ी ही दूर चले थे कि मेरा मन मिचलाने लगा। पेट व छाती में भी दर्द होने लगा। मैंने सोचा, वायु-विकार होगा इसलिये नॉवलजीन टेबलेट ले ली। फिर ट्रेन से हम उज्जैन आ रहे थे तब नागदा आते-आते तो मेरी छाती में दर्द असहनीय हो गया। नागदा में एक प्राइवेट डॉक्टर को दिखाया तो उन्होंने हार्ट-अटैक बतलाकर तुरन्त ही जनकल्याण बिड़ला अस्पताल में जाने को कहा। मैं मेरे साथ जो कांस्टेबल थे उनकी सहायता से दोपहर तीन बजे अस्पताल पहुँचा तब तक मुझे तीसरा अटैक भी आ गया था। पहला अटैक करीब सवा नौ बजे, दूसरा अटैक बारह बजे और तीसरा अटैक तीन बजे आया। अस्पताल पहुँचते-पहुँचते मैं दर्द के कारण बेहोश हो गया था। डॉक्टरों ने Check-up करके Serious Case बताकर मेरे घरवालों को बुलाने को कहा। उस समय मेरे सभी घरवाले राजस्थान के चूरू जिले में मेरे पैतृक गाँव रतननगर में थे। मुझे बेहोशी की अवस्था में गहरे काले रंग के, काली टोपी पहने हुए चार आदमी दिखे। वे डर से सहमे हुए थे। धीरे-धीरे मेरी तरफ आगे बढ़ रहे थे। फिर मेरे पलंग (खाट) के चारों कोनों पर एक-एक खड़े हो गये। उस समय मुझे वे यमदूत जैसे नजर आये। मैंने सोचा ये अब मुझे लेकर जायेंगे। तब मैंने प्रायश्चित्त किया कि मैंने ईश्वर की भक्ति नहीं की, वरना आज ये लोग मुझे लेने नहीं आते। फिर मैंने बेहोशी की अवस्था में ही संकल्प किया कि इस बार इनके हाथ से बच जाऊँगा तो जप-ध्यान खूब करूँगा। मेरे संकल्प के साथ ही पूज्य बापू आकाशमार्ग से आते हुए मुझे दिखाई दिए। पूज्य बापू के आते ही वे चारों डरावने यमदूत जैसे नजर आनेवाले आदमी भाग गये। पूज्य बापू ने मेरे सिर पर हाथ रखा और कहा : ''बेटा! हिम्मत रख। मैं आ गया हूँ। अब तुझे कुछ नहीं होगा।''

सभी शिष्य रक्षा पाते हैं सूक्ष्म शरीर गुरु आते हैं...

उसके तुरंत बाद मेरी बेहोशी टूट गई। डॉक्टरों ने मेरे Serious Case को मात्र ६ दिन में ही बहुत अच्छा सुधार बताकर अस्पताल से छुट्टी दे दी। अब मुझे हार्ट में किसी प्रकार की परेशानी नहीं है। यह सब मेरे पूज्य गुरुदेव की कृपा का ही परिणाम है जो आज मैं एकदम स्वस्थ हूँ। पूज्य गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरे कोटि-कोटि प्रणाम!

- साधक भँवरलाल मीणा
मु. पो. रतननगर, वार्ड नं. २, जि. चूरू (राज.).

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी तरह की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

प्रधान मंत्री
PRIME MINISTER
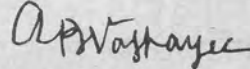
MESSAGE

I am happy to know that the followers of Sant Sri Asaramji Bapu are planning to bring out a special edition of the magazine 'Rishi Prasad' to commemorate Guru Poonam. Sant Sri Asaramji Bapu is one of the leading spiritual figures of contemporary India. His contribution to propagating our spiritual and cultural heritage is a testimony to both his scholarship as well as his attractive style of discourse.

The magazine 'Rishi Prasad' has served as the carrier of spiritual knowledge to millions of readers in the three languages in which it is published -- Hindi, Gujarati and Marathi. I am happy to know that an English edition is also planned. This will enable Sant Sri Asaramji Bapu's message to be propagated to wider audiences abroad.

I send my hearty felicitations to all those who are associated with this noble endeavour.

ABVajpayee
(A.B. Vajpayee)

New Delhi
July 10, 1998

प्रधान मंत्री का संदेश

मैं यह जानकर प्रसन्न हूँ कि संत श्री आसारामजी बापू के अनुयायीगण गुरुपूर्णिमा पर्व के उपलक्ष्य में 'ऋषि प्रसाद' का विशेषांक प्रकाशित करने का आयोजन कर रहे हैं। संत श्री आसारामजी बापू समकालीन भारत के अग्रगण्य आध्यात्मिक विभूतियों में से एक हैं। हमारी आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत के प्रचार-प्रसार में उनका योगदान उनकी विलक्षण विद्वत्ता एवं आकर्षक सत्संग-शैली दोनों को प्रमाणित करता है।

हिन्दी, गुजराती एवं मराठी इन तीन भाषाओं में प्रकाशित होनेवाली 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका लाखों-लाखों पाठकों तक आध्यात्मिक ज्ञान पहुँचाने की सेवा कर रही है। मैं यह जानकर प्रसन्न हूँ कि इसके अंग्रेजी संस्करण के प्रकाशन की भी योजना है। इससे संत श्री आसारामजी बापू का संदेश विदेशों में व्यापक पाठकगण तक पहुँच सकेगा।

मैं उन सभी को हार्दिक बधाइयाँ देता हूँ जो इस सत्प्रयास में संलग्न हैं।

(हस्ताक्षर)
ए. बी. वाजपेयी

नई दिल्ली
जुलाई १०, १९९८

जिस प्रकार दीपावली, होली आदि उत्सव में लोगों के मन एक नये उत्साह और उमंग से प्रफुल्लित हो उठते हैं उसी प्रकार गुरुपूर्णिमा के दिन साधकों का हृदय गुरुदर्शन करके आह्लादित और आनंदित हो उठता है। गुरुपूर्णिमा महोत्सव साधकों एवं सत्शिष्यों के लिए दीवाली ही कही जाती है। शिष्यगण विश्व में कहीं भी रहते हों, वे इस दिन अपने ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु के दर्शन करने दौड़े-दौड़े चले आते हैं।

पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में साधकों की अधिकाधिक संख्या को देखते हुए गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी गुरुपूर्णिमा महोत्सव वर्षा की रिमझिम फुहार और अलौकिक आनन्द के साथ तीन स्थानों में सम्पन्न हुआ।

पानीपत : ३ जुलाई को हरियाणा के हरियाली से पूर्ण प्राकृतिक वातावरण में पानीपत के मध्य डाडोला गाँव में नवनिर्मित संत श्री आसारामजी आश्रम का उद्घाटन पूज्यश्री के करकमलों द्वारा हुआ। यहाँ ४ से ६ जुलाई के दौरान पंजाब और हरियाणा के अलावा दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश आदि प्रांतों के लाखों साधकों ने दर्शन-सत्संग का लाभ लिया। ६ जुलाई के दिन अपार बने भक्तसमूह को पूज्यश्री ने हेलिकॉप्टर से दर्शन देकर भावविभोर कर दिया। गगनमंडल 'हरि ॐ...' और 'जय-जयकार' की ध्वनि से गूँज उठा।

इन्दौर : शिष्यों के इस पावन उत्सव का दूसरा चरण इन्दौर में खंडवा रोड स्थित आश्रम में ७ और ८ जुलाई को मूसलाधार वर्षा के बीच संपन्न हुआ। पिछले ३२ वर्षों में यह चौथा अवसर था कि पूज्यश्री ने यहाँ गुरुपूर्णिमा का आयोजन करने की स्वीकृति प्रदान की थी। देश-विदेश से श्रद्धालुजन पूज्यश्री के दर्शन व सत्संग का लाभ पाने के लिए ६ जुलाई से ही आश्रम पहुँचना शुरू हो गये थे। इन्दौर का सत्संग मूसलाधार वर्षा के बीच संपन्न हुआ। हृदय में गुरुकृपा की वर्षा हो रही हो वहाँ बाह्य वर्षा की परवाह भला किसको हो ? साधकों ने गुरुदर्शन कर कृतार्थता का अनुभव किया। लगातार मेघ देवता की कृपा से लोगों का शरीर भीग रहा था किन्तु दिल दिलबर के प्रेम में सराबोर हो रहा था। पूज्यश्री ने हरिनाम की प्यालियाँ छकं-छककर पिलायीं।

महाराष्ट्र के दूर-दूर के भागों से पैदल ही चले साधकों-भक्तों के क़ाफिलों ने पूज्यश्री के दर्शन कर सत्संग-प्रवचन का लाभ लिया।

८ जुलाई के दिन शाम को पूज्य बापूजी वायुयान द्वारा अमदावाद के लिये रवाना हुए।

अमदावाद : ९ जुलाई के दिन साबरमती तट पर स्थित आश्रम में जीवन्मुक्त संत पूज्य बापूजी के पावन सान्निध्य में गुरुपूर्णिमा महोत्सव धूम-धाम से संपन्न हुआ। एक महीने पहले से ही आश्रम में महोत्सव की तैयारियाँ जोर-शोर से शुरू हो गयी थीं। ९ जुलाई के दिन गुरुपूर्णिमा महोत्सव के पावन पर्व पर आश्रम में बड़ा मनोहारी वातावरण था।

७ जुलाई से ही देश-विदेश व भारत के दूर सुदूर के क्षेत्रों से हजारों-लाखों की तादाद में श्रद्धालुगण आश्रम में आना शुरू हो गये थे। कोई बस से आ रहा था, कोई ट्रेन से और कोई वायुयान से पहुँच रहा था। अलग-अलग प्रांतों से हजारों की तादाद में श्रद्धालुगण पैदल ही पूज्य बापूजी के दर्शन के लिये चल पड़े थे। ८ जुलाई के दिन जैसे ही पूज्य बापूजी इन्दौर से अमदावाद आश्रम पहुँचे कि तुरन्त ही भक्तों का विशाल समूह पूज्य बापूजी के दर्शन व सत्संग-प्रवचन के लिये उमड़ पड़ा। ८ जुलाई के दिन रात्रि में ८ बजे से लेकर ११-३० बजे तक दर्शन की लाईन चली। ९ जुलाई को गुरुपूर्णिमा के पर्व पर गुरुदर्शन करने के लिए ८ जुलाई की रात्रि में १२-३० बजे से ही श्रद्धालुगण स्नानादि से निवृत्त होकर लाईनों में लग गये। घंटों बीते और जैसे ही ब्रह्ममुहूर्त की मंगल वेला में पूज्यश्री व्यासपीठ पर बिराजमान हुए कि तुरन्त आश्रम का पूरा प्रांगण तालियों की गड़गड़ाहट व 'हरि ॐ...' के मंगल उद्घोष से गुँजायमान हो गया। पूज्य बापूजी ने सत्संग में गुरु-शिष्य का संबंध समझाते हुए कहा :

''गुरु-शिष्य का संबंध तमाम लौकिक संबंधों से विलक्षण होता है। पति-पत्नी का संबंध कामप्रधान है। दुकानदार और ग्राहक का संबंध चीज-वस्तु और धनप्रधान है। नेता और जनता का संबंध 'वोट' और सुविधाप्रधान है। ऐसे सारे संबंध ऐहिक एवं नश्वर चीजों के लिये हैं जबकि सद्गुरु और सत्शिष्य का संबंध भगवानप्रधान है... मुक्तिप्रधान है और वह संबंध एक-दो दिन का, एक-दो वर्ष का या पाँच-पच्चीस वर्ष का नहीं होता बल्कि जब तक शिष्य गुरुतत्त्व का साक्षात्कार नहीं कर लेता तब तक का संबंध होता है... जन्म-जन्म का संबंध होता है।''

सत्संग के बाद शुरू हुईं दर्शनार्थियों की लम्बी-लम्बी लाइनें। पाणीपत व इन्दौर में गुरुपूर्णिमा महोत्सव का आयोजन हो जाने के बाद भी इस पावन पर्व पर यहाँ अमदावाद आश्रम में लाखों की तादाद में दर्शनार्थी आ पहुँचे थे। साधकों-शिष्यों-भक्तों की विशाल संख्या ने इस बार पहले के सभी रिकॉर्ड तोड़ दिये। सुबह से ही भाइयों व बहनों की कई किलोमीटर लम्बी लाइनें प्रातः काल से लेकर रात्रि को ९ बजे तक चलती रहीं। फिर भी किसी के चेहरे पर थकान की कोई शिकन या फरियाद नजर नहीं आ रही थी अपितु तपस्वियों की नाईं सबके मुखमंडल आनंद, प्रसन्नता और गुरुदर्शन के लिए तप-तेज से तेजोमय भास रहे थे। लाईन में जिसे देखो वह कोई-न-कोई सत्प्रवृत्ति में तन्मय था। कोई 'श्रीगुरुगीता' पढ़ रहा था तो कोई 'श्रीआसारामायण' गुनगुना रहा था तो कोई 'ऋषिप्रसाद' या अन्य सत्साहित्य पढ़ने में मशगुल था। कुछ लोग जगह-जगह एकत्रित होकर पूज्यश्री के सान्निध्य में आने के बाद उनको प्राप्त हुए आध्यात्मिक अनुभव सुना रहे थे और दूसरे लोग बड़े ही श्रद्धा-भाव से ध्यान देकर उन अनुभवों को सुन रहे थे... गद्गद् हुए जा रहे थे। ईश्वर के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए उत्साह और उमंगपूर्वक गुरुदर्शनार्थ लाईनों में खड़े हुए एवं दूर-दूर से पैदल आनेवाले यात्रियों को नींबू-पानी पिलाने में सेवाधारी साधक लोग लग गये थे। श्रद्धा-प्रेम, भक्ति-भाव, सेवा-सुहृदता का जो दृश्य आश्रम के परिसर में बना था वह तो देखते ही बनता था।

गुरुपूनम दर्शनार्थियों की लाइनें ८ जुलाई की रात्रि से प्रारंभ हुईं और ११ जुलाई की शाम तक चलीं। श्रद्धालुओं ने कतारबद्ध, अनुशासित एवं बिना किसी कोलाहल के गुरुदर्शन व गुरुज्ञान पाकर धन्यता का अनुभव किया। जो बेचारे किसी कारण नहीं आ पाते वे अपने-अपने स्थानों में यह पुण्य और प्रेरणादायी पावन पर्व मना ही लेते हैं।

अमदावाद आश्रम में निःशुल्क आयुर्वैदिक चिकित्सा शिविर

संत श्री आसारामजी आश्रम, अमदावाद में आठ दिवसीय निःशुल्क आयुर्वैदिक चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया। १९ जुलाई से प्रारम्भ हुआ यह शिविर २६ जुलाई तक चला। इस शिविर में अनुभवी वैद्यों द्वारा तमाम असाध्य बीमारियों जैसे टी. बी., कैन्सर, श्वास के रोग, पेट के रोग आदि का इलाज आयुर्वैदिक पद्धति से सफलतापूर्वक सम्पन्न कराया गया।

इस चिकित्सा शिविर में देश के कोने-कोने से आए लोगों को संतोषप्रद इलाज प्राप्त हुआ। इस शिविर की विशेषता यह थी कि इसमें भरती सभी मरीजों के लिए भोजन और आवास की निःशुल्क व्यवस्था के साथ-साथ औषधियाँ भी मुफ्त में प्रदान की गई। इस शिविर में लगभग छः हजार मरीजों का निःशुल्क उपचार किया गया।

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	सत्संग समारोह	स्थान	फोन
७ से ९ अगस्त '९८	रक्षाबंधन महोत्सव सत्संग समारोह	संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-५.	६८५३४१, ६८७९३६.

जंन्माष्टमी महोत्सव सत्संग-समारोह भी सूरत आश्रम में ही होगा।

साँई तेरी शोभा बरणी न जाये, तेरी आँखें हैं तेजस्वी तेज अध्यात्म बहाय ।
चमक-दमकता भाल विशाल, प्रति पल स्मित लहराये ॥

पानीपत(हरियाणा) में पहली बार गुरुपूनम उत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाकर, बापूजी के दर्शन करके कृतकृत्य हो रहे पंजाब-हरियाणा के भक्त।

गुरुपूनम की बेला पर मिला सत्य का ज्ञान। कृपालु गुरुदेव ने मिटाया अविद्या-अज्ञान ॥

इन्दौर आश्रम के मनोरम्य पावन वातावरण में मनाये गये गुरुपूनम पर्व का दृश्य।

NARAYANHARI OM SANTI

R.N.I. NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABD PSO LICENCE NO. 207 Regd. No. GAMC/1132. BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO. 03 Regd. No. MH/MNV-02.